अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

वर्ष-39, अंक-24, 1-15 अगस्त, 2016

सच्चा स्वराज्य

भले ही पाकिस्तान और भारत भौगोलिक दृष्टि से अलग रहें, पर दिल से एक होंगे, तो यह ध्येय आपके और मेरे लिए बड़ा ही आदर्शमय और भव्य है। जब तक यह कार्यरूप में परिणत नहीं होता, तब तक किसी प्रसिद्ध चित्रकार के चित्र के बालक की तरह मुझे जरा भी सन्तोष न देगा।...

सन् १८१६ में मैं एक बार दिल्ली और आगरे का किला देखने गया था, तो उसके एक दरवाजे पर इस आशय की कविता पढ़ी कि 'दुनिया में जो कुछ स्वर्ग हो, वह यहीं है।' अपना इतना वैभव होते हुए भी यह किला मेरी दृष्टि में स्वर्ग जैसा तो नहीं ही लगा। किन्तु अगर पाकिस्तान इसके योग्य बने और उसके दरवाजे-दरवाजे ऐसी कविताएँ लिखी जाएँ, तो सचमुच ही मुझे अत्यधिक सन्तोष होगा, भले ही ऐसा स्वर्ग भारत में हो या पाकिस्तान में। इस स्वर्ग में कोई गरीब न होगा, कोई पूँजीपति न होगा। कोई कारखाने का करोड़पति न होगा, तो कोई आधा पेट काम करनेवाला मजदूर भी न होगा। सबको समान और खुद कमाई की रोटी खाने को मिलेगी।

('बापू की अन्तिम झाँकी' से उद्धृत)

–महात्मा गांधी

सर्व सेवा संघ
(अखिल भारत सर्वोदय मंडल)
द्वारा प्रकाशित

अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र
सर्वोदय जगत
सत्य, अहिंसा एवं सर्वोदय-सम्पूर्ण क्रांति का संदेश वाहक

वर्ष : 39, अंक : 24, 1-15 अगस्त, 2016

संपादक
बिमल कुमार
मो. : 9235772595

कार्यकारी संपादक
डॉ.योगेन्द्र यादव

संपादक मंडल
डॉ. रामजी सिंह भवानी शंकर 'कुसुम'

संपादकीय कार्यालय
सर्व सेवा संघ, साधना केन्द्र
राजघाट, वाराणसी-221001 (उ.प्र.)
फोन : 0542-2440-385/223
ईमेल : sarvodayajagat@gmail.com
Website : sssprakashan.com

शुल्क

मूल्य	:	पांच रुपये
वार्षिक	:	100 रुपये
आजीवन	:	1000 रुपये

खाता संख्या : 383502010004310
IFSC No. UBIN-0538353
Union Bank of India

विज्ञापन दर
पूरा पृष्ठ : 2000 रुपये
आधा पृष्ठ : 1000 रुपये
चौथाई पृष्ठ : 500 रुपये

इस अंक में...

1. आत्मविश्वास एवं अभिमान का... 02
2. पन्द्रह अगस्त का अपूर्व... 03
3. महात्मा गांधी पर पहली कविता... 05
4. गांधीजी का कांग्रेस परित्याग... 06
5. वीरान करते राजपथ... 08
6. उपवास का महत्त्व... 09
7. आत्मीयता के विस्तार का नाम... 12
8. लोकतंत्र की विदाई-बेला... 13
9. व्यक्तिगत स्वतंत्रता और... 15
10. पानी गटकते ताप विद्युत संयंत्र... 16
11.नीम के औषधीय गुण... 18
12. मेरा हक मुझे वापस दे दो.. 20

संपादकीय

आत्मविश्वास एवं अभिमान की गलत परिपाटी

जिस पश्चिमी सभ्यता को लेकर महात्मा गांधी हमेशा सशंकित रहते थे, उसका परिणाम आज भारतीय समाज में पूरी तरह दिखायी पड़ने लगा है। भौतिक संसाधनों के पीछे भागने और उसके संचय करने की प्रतिस्पर्धा शहरों से निकल कर गाँवों में पहुँच गयी है। जिसके कारण यहाँ भी भौतिक एवं जरूरी संसाधनों को जमा करने की होड़ लग गयी है। आज गाँव के हर घर में मोबाइल से लेकर कुदाल-फावड़ा सहित हर संसाधन मौजूद हैं। जैसे-जैसे इन भौतिक संसाधनों ने गाँवों में अपनी पैठ बनायी, वैसे-वैसे गाँव का भाईचारा समाप्त होता गया। आज स्थिति यह हो गयी है कि एक ही मोहल्ले में रहने के बावजूद लोग हफ्तों एक-दूसरे से बात नहीं करते हैं। उनके बीच एक तरह का मनमुटाव देखा जा सकता है। यह मनमुटाव, यह दूरी उस आत्मविश्वास और अभिमान के कारण पैदा हुआ है कि मैं खुद सक्षम हूँ, मुझे इनकी कोई जरूरत नहीं है। यह भाव थोड़ा-बहुत हर गाँववासी में पाया जाता है।

महात्मा गांधी को इसका आभास पहले ही हो चुका था। इसी कारण उन्होंने आगाह किया था कि खेती का कार्य बड़े स्तर पर नहीं करना चाहिए। उसे आधुनिक यंत्रों पर निर्भर नहीं बनाना चाहिए। उसका स्वरूप सहकारी हो, और वह व्यक्तिगत स्तर पर किया जाए। ऐसी खेती रुपया कमाने के लिए नहीं होगी। इसलिए वह ऐसी फसलें नहीं बोयेगा, जो मिट्टी और जल का विनाश करेगा। इससे सहजीवन की स्थिति पैदा होगी और समाज में होनेवाली नाहक होड़ समाप्त होगी।

आजादी के बाद जिस तरह की राज-व्यवस्था की कल्पना महात्मा गांधी ने की थी, उसके अनुसार पूरी व्यवस्था में आमूलचूल परिवर्तन जरूरी था। किन्तु जिसके हाथ में सत्ता गयी, जिन पर महात्मा गांधी ने विश्वास किया, उन्हें अंग्रेज ही सबसे बुद्धिमान दिखे और उनकी शासन प्रणाली ही सर्वश्रेष्ठ नजर आयी, जिसके कारण उन्होंने महात्मा गांधी से प्राप्त सारी शिक्षाओं को दरकिनार कर दिया। जिसका परिणाम यह हुआ कि राज-व्यवस्था एवं समाज के बीच में जो रिश्ता कायम होना चाहिए था, वह नहीं हो सका। संविधान में भी महात्मा गांधी के विचारों को नीति निर्देशक तत्त्वों के रूप में समाहित करके इतिश्री कर ली गयी। इसलिए कानून और समाज के बीच में भी कोई मेल नहीं बैठ पाया। जिस तरह से आजादी के पहले लोग कानून से भागते थे, उसे क्रूर समझते थे, उसी प्रकार आजादी के बाद यानी आज तक कानून का हौवा लोगों का पीछा करता दिखाई देता है। जबकि महात्मा गांधी ने कानून के व्यवहारिक पक्ष पर ज्यादा ध्यान दिया था। आज कानून में यह पक्ष पूरी तरह गौण हो गया है। इसके परिणामस्वरूप देश की जेलें निरपराध लोगों से भरी पड़ी हैं।

भारतीय समाज की सारगर्भित परम्पराओं को अंग्रेजों ने अपने आने के दिन से ही तोड़ना शुरू कर दिया था। महात्मा गांधी जब 1915 में दक्षिण अफ्रीका से भारत लौटे, उन्हें कई मसलों में अंग्रेजों का सामीप्य प्राप्त हुआ, इसके बाद उन्होंने घोषणा की कि अंग्रेज चालबाजी करके हमें रिझाते हैं, और रिझाकर हमसे काम लेते हैं। इस तरह से उन्होंने हमारे शोषण के साथ हमें अंग्रेजियत में रंगना शुरू किया। इसकी हमें इतनी आदत पड़ गयी कि आजादी के बाद भी हमने उन्हें छोड़ना उचित नहीं समझा, जिसकी झलक आज भी शहर से लेकर गाँव तक के जीवन में देखी जा सकती है।

उन्होंने ऐसी शिक्षा व्यवस्था लागू की, जिसने नौकरशाही पैदा की। इसी समाज→

पन्द्रह अगस्त का अपूर्व पुण्यपर्व

❑ र. श्री धोत्रे

15 अगस्त 1951 को सृजित इस आलेख में र. श्री धोत्रेजी ने स्वतंत्रता के महत्त्व तथा चुनौतियों को सामने रखा है, जो आज भी प्रासंगिक है।

स्वतंत्रता की प्रतीति

आज का दिवस अत्यन्त शुभ दिवस है। आज से पाँच साल पहले हमारा भारत देश दीर्घकालीन परतंत्रता से स्वतंत्र हुआ। आज पाँच साल पूरे होते हैं। परतंत्रता के इस देश को छुड़ाने के लिए हमारे देश के अनेक नर-नारियों ने ही नहीं, छोटे-छोटे बालक-बालिकाओं ने भी अपने प्राण अर्पण करके प्रयत्न किये हैं। इसी के फलस्वरूप पाँच साल पहले हमारा देश पूर्ण स्वतंत्र हो गया। यहाँ जो बालक-बालिकाएँ और युवक-युवतियाँ बैठी हैं, उनको मैं बधाई देता हूँ कि उनकी शिक्षा स्वतंत्र देश के बालक-बालिकाओं के नाते हो रही है। शायद इस स्वतंत्रता का आनन्द उनको उतना नहीं प्रतीत होगा, जितना मेरी उम्र के लोग प्रतीत कर रहे हैं। क्योंकि देश जब परतंत्र था तब क्या दिक्कतें आयीं, इसका खयाल हमें ज्यादा है। गुलामी की दशा में इस देश में स्वतंत्रता का नाम लेना, वंदेमातरम् कहना, अपराध था। आज यह राष्ट्र-ध्वज, जिसका वंदन हमने किया और सरकार की ओर से भी आज जिसकी वंदना भारत के सभी राज्यों में, नगरों में, हो रही है, उस ध्वज को रास्ते पर से लेकर गुजरना भी कठिन कार्य था। इसके लिए हमें कष्ट सहन करना पड़ता था। पर यह इतिहास की बात है। आज सत्य यह है कि हम आजाद हैं।

परतंत्रता के दुष्परिणाम : गैरजिम्मेवारी

देश जब परतंत्र होता है तब अनेक खराबियाँ पैदा होती हैं। पर सबसे बड़ी खराबी यह होती है कि देश के लोगों में जिम्मेवारी की भावना का पूर्ण अभाव हो जाता है। जो कुछ कष्ट या दुख देश में दिखायी पड़ता है, उसे हम परकीय शासन के मत्थे मढ़ कर अपने को उससे बरी मान लेते हैं। इतना ही नहीं, बल्कि 'यह देश हमारा है,' यह भावना भी नष्ट हो जाती है। गत विश्वयुद्ध के समय देश की जनता की भावना का आप जरा स्मरण कीजिए। उस वक्त हम गुलाम थे। जर्मनी आदि युद्धरत देशों के लोग लड़ाई में जुटे हुए थे। आये दिन खबरें आती थीं कि जर्मन लोग अंग्रेजों को हटा रहे हैं, पीट रहे हैं। उस वक्त हमारे देशवासियों को बड़ी खुशी हुआ करती थी। उस समय जब एक ओर से जर्मनी तथा दूसरी ओर से जापान का भारत पर आक्रमण होने का खतरा था, अंग्रेज भाग जायेंगे और जर्मनी या जापान हिन्दुस्तान पर कब्जा करेगा, इसी बात से लोगों को खुशी होती थी। वास्तव में इसमें खुश होने की बात क्या है? पर गुलाम मनोवृत्ति होने के कारण ऐसी बातों पर भी जनता खुश होती थी।

मानसिक दुर्बलता

गुलामी से एक प्रकार की मानसिक दुर्बलता पैदा होती है। इसका दर्शन जब बापू को स्पष्ट हुआ तब उन्होंने ''भारत छोड़ो'' आंदोलन चलाया। अंग्रेजों से उन्होंने प्रार्थना की कि तुम हमें, भगवान् के भरोसे ही क्यों न हो, लेकिन, छोड़कर चले जाओ। बाद में जो कुछ कठिनाई आवेगी उसका सामना हम खुद कर लेंगे। बापू का यह उपाय जनता की हीन मनोवृत्ति नष्ट करने के लिए ही था। दूसरा मुल्क अगर हम पर आक्रमण करता है, तो उससे बचने के लिए जनता को तैयार करने का काम बापू को करना था। बापू उस वक्त की जनता की मनोदशा अच्छी तरह से जानते थे। वे कहते थे कि जापान अगर भारत में आ गया तो लोग फूलों के हारों से जापानियों का स्वागत करेंगे। वास्तव में यह दुर्गुण गुलामी के कारण ही आया था।

पर आज तो खुशी की बात है कि अनेक कारणों के परिणामस्वरूप देश आजाद हुआ है और दिन-ब-दिन हमारी तरक्की हो रही है।

आत्मविश्वास की जरूरत

देश आजाद होने के बाद जो-जो

→से निकलने वाले ये नौकरशाह आज किस तरह इस देश की अवाम के साथ व्यवहार करते हैं, यह किसी से छिपा नहीं है। पैसा और पद का जितना दुरुपयोग यह वर्ग कर रहा है, उतना दुरूपयोग कोई नहीं कर रहा है। यदि इन्हें आप पैसा दे दें, तो दुनिया का सबसे घृणतम अपराध करने के बावजूद भी ये आपको बाइज्जत साबित कर देंगे। यदि इन्हें लगेगा कि सीधा-साधा व्यक्ति इनके लिए घातक है, तो उसे देश का सबसे बड़ा अपराधी बना देंगे।

यदि हमें इसका हल ढूँढ़ना है, तो उसके लिए कहीं जाने की जरूरत नहीं है, समाज में अभिमान एवं आत्मविश्वास की गलत परिपाटी पड़ गयी है, ऐसे तमाम प्रश्नों का हल हमें महात्मा गांधी ने अपनी एक छोटी-सी पुस्तक 'हिन्द स्वराज' दे दिया है। बस उसे पढ़ने, जीवन में अपनाने की जरूरत है। तभी भारतीयता बचेगी, यहाँ का शहर बचेगा, गाँव बचेगा और पृथ्वी पर जीवन बचेगा। **–डॉ. योगेन्द्र यादव**

आशाएँ हम कर रहे थे, जो सुख-स्वप्न हम देख रहे थे, उनकी पूर्ति होती हुई आज नहीं दिखायी पड़ रही है। हालत तो ऐसी है कि क्या अनपढ़ और क्या पढ़े-लिखे, दोनों सुर में सुर मिला कर कह रहे हैं कि ''स्वतंत्र होकर भी हमने क्या किया? क्या प्राप्त किया? इससे तो अंग्रेजों का राज्य अच्छा था!'' यह कितनी खेदजनक स्थिति है! इससे हमें बचना है। जो आजादी हमने प्राप्त की है उसका महत्त्व हमें समझना चाहिए। देश की बिगड़ी हुई हालत सुधारने की जिम्मेवारी हम पर ही है। इसलिए इस तरह का विचार करना कि अंग्रेजों का राज्य आज के राज्य से अच्छा था, यह बड़ी भारी गलती है, बड़ा दोषमय विचार है। आज देश का शासन जिन लोगों के हाथों में है, वे अगर अपना काम ठीक तरह से नहीं कर रहे हैं, या ठीक तरह नहीं कर सकते हैं, तो जिनमें सामर्थ्य है, वे सामने आवें और सत्ता के सूत्र अपने हाथों में ले लें। पर वैसा करने के बदले, विदेशी सल्तनत कहीं अच्छी थी, ऐसा मानना घातक होगा। इसके विपरीत, देश हमारा है, हम इसे बना सकेंगे, इस प्रकार की भावना हमें अपने दिलों में निर्माण करनी चाहिए।

रूसी क्रांति का दृष्टान्त

रूस में जब राज्यक्रांति हुई उस वक्त वहाँ जार का राज्य था। प्रथम विश्वयुद्ध के वक्त रूस के लोग लड़ाई तो लड़ते थे, पर यह मानते हुए कि वे अपने लिए नहीं, वरन् जार के लिए लड़ रहे हैं। 'राज्य तो जार का है, हमारा नहीं'। अतः लड़ाई का सामान बहुत-सा होते हुए भी रूस जर्मनी से परास्त होता गया। पर जब रूस में राज्य-क्रांति हुई और उस मुल्क पर दुनिया के अन्य राष्ट्रों ने चारों ओर से घेरा डाला, तब बिना शस्त्रों के ही रूस की जनता ने प्रतिकार किया। उस भावना का जिन लोगों ने ठीक-ठीक वर्णन किया है, उनका कथन है कि निहत्थे रूसी लोग अब मास्को तथा पेट्रोग्राड को अपना मानने लगे थे, जार का नहीं। इसीलिए जब हाथ में शस्त्र नहीं थे, ऐसी हालत में मुक्कों से लड़ने की तैयारी उन्होंने की। हमारे देश में भी इस भावना को हमें फैलाना होगा। ऐसा होगा तभी हम सच्चे अर्थ में स्वाधीन हुए, ऐसा हम मान सकेंगे।

यह 'भयंकर स्वराज'

इसलिए आपसे मेरी प्रार्थना है कि स्वाधीनता का सही अर्थ आप समझिये। जब बापू ने ''भारत छोड़ो'' आंदोलन शुरू किया तब बड़े-बड़े नेता लोगों ने भी उसका विरोध किया था। उन लोगों का कहना था कि इस आंदोलन से क्या फायदा होगा? ऐसे वक्त बापू ने 1942 के मई में हम लोगों की एक सभा बुलाई और हमको आंदोलन का मतलब समझा कर बताया। उस वक्त उस आंदोलन का हमारे में से भी कइयों ने विरोध किया था। फिर भी आखिर देश ने तो उस कार्यक्रम को उठाया और उसके परिणामस्वरूप देश आजाद हुआ। बापू की मृत्यु के एक मास पूर्व हम दिल्ली में बापू से मिले थे। उस वक्त बापू से हमने पूछा ''रचनात्मक कार्यकर्ताओं से आपकी क्या अपेक्षा है?'' बापू ने जवाब दिया, ''1942 में जब हमने 'भारत छोड़ो आंदोलन' चलाया तब कांग्रेस के कुछ लोग, जिनमें कुछ बड़े नेता भी शामिल थे, हँसते थे। पर हमने देखा कि आखिर उसी आंदोलन के फलस्वरूप अंग्रेज चले गये। वे चले तो गये, पर कैसा 'भयंकर स्वराज्य' हमारे लिए छोड़ गये। पर अब हमें उसी को 'रामराज्य' में परिवर्तित करने में जुट जाना चाहिए।'' जो स्वराज्य हमें मिला है, उसे बापू ने 'भयंकर' कहा था। उन्होंने आगे बताया कि ''अगर हम जल्दी ही नहीं सँभलेंगे तो यह स्वराज्य सबको खा जायेगा। मुझे तो यह अब भी प्रतिक्षण खा रहा है। यह चीज तो आप भी महसूस कर रहे होंगे।'' और सचमुच ही एक मास के अंदर ही वह बापू को खा गया। स्वतंत्र नागरिक की हैसियत से अगर हम अपना कर्तव्य नहीं समझ लेंगे, तो सचमुच में यह स्वराज्य हमारे लिए भी खतरनाक साबित होगा।

सेवाग्राम का वायुमंडल

सेवाग्राम में जो लोग बैठे हैं, उनके लिए मैं क्या कहूँ? वास्तव में सेवाग्राम के वायुमंडल में ही बापू हैं। पर हम लोगों में जब वह श्रद्धा और आदर्श के लिए त्याग करने की वह लगन पैदा होगी तभी तो हमारा ध्येय सिद्ध होगा। आज स्वराज्य-प्राप्ति के बाद, जो कुछ तबदीलियाँ दिखायी दे रही हैं, उनमें से कुछ तो अच्छी हैं, पर कुछ बुरी भी हैं। स्वतंत्रता-प्राप्ति के पूर्व हममें जो शक्ति थी वह आज लुप्त होती दिखायी दे रही है। शायद ऐसा होना स्वाभाविक ही हो।

ग्लॅडस्टन का उदाहरण

यह समझाने के लिए मैं आपको एक मिसाल दूँगा। आप जानते ही हैं कि इंग्लैण्ड के ग्लॅडस्टन साहब एक जमाने में वहाँ के प्रधानमंत्री थे। एक बार ग्लॅडस्टन साहब गाँव को जाने के लिए स्टेशन पर गये। उनके पुत्र भी उसी ट्रेन से जा रहे थे। गाड़ी आने पर जल्दी-जल्दी में लोग गाड़ी में चढ़े। ग्लॅडस्टन साहब अपनी आदत के मुताबिक निचले दर्जे में सवार हो गये और उनका लड़का उँचे दर्जे में बैठ गया। यह देख कर एक भाई ने ग्लॅडस्टन साहब से पूछा, ''यह क्या बात है कि आप तो आम वर्ग के डिब्बे में आकर बैठे और आपके पुत्र ऊँचे दर्जे में बैठे हैं?'' तब उन्होंने हँसते हुए जवाब दिया, ''अरे भाई, मैं तो किसान का बेटा हूँ, इसलिए निचले दर्जे में बैठा हूँ, पर मेरा लड़का तो प्रधान मंत्री का बेटा है, अतः वह उच्च श्रेणी में जाकर बैठा।'' कुछ इसी प्रकार की हमारी भी हालत है। जब हम

... शेष पृष्ठ 8 पर

महात्मा गांधी पर पहली कविता

❑ बद्री नारायण तिवारी

सागर विश्व विद्यालय के पद्मश्री डॉ. लक्ष्मीनारायण दुबे का लगभग तीन दशकपूर्व जब से परिचय हुआ—उनके ऐतिहासिक तथ्यों पर आधारित पत्र या बड़े आलेख आते रहते थे। आज वह हमारे बीच नहीं हैं किन्तु उनकी कार्यशैली की यादें आती रहती हैं। मध्य प्रदेश के शाजापुर में जन्में किन्तु कर्मक्षेत्र कानपुर बनानेवाले सेनानी कवि पं. बालकृष्ण शर्मा ''नवीन'' पर शोधपूर्ण ग्रंथों के लेखक डॉ. दुबे उनकी शताब्दी का श्री गणेश मुझसे कराने हेतु कानपुर आकर चर्चा की। मैंने सर्वप्रथम चिकित्सक किन्तु हिन्दी के कर्मठ सेवक डॉ. सूर्यप्रसाद शुक्ल से तद्विषयक चर्चा करने पर उन्होंने आयोजन करना स्वीकार करने पर कार्यक्रम उत्साहपूर्वक सम्पन्न हुआ। समारोह की अध्यक्षता तत्कालीन राज्यसभा सदस्य श्री नरेन्द्र मोहन संपादक 'जागरण' ने की और नवीनजी की स्मृति में एक 'नवीन मंजूषा' स्मारिका का लोकार्पण भी हुआ।

भारतीय आत्मा माखनलाल चतुर्वेदी ने अंग्रेजी भारत को उन्होंने मृदंग से उपमित किया है। चतुर्वेदीजी ने सन् 1913 महात्मा गांधी के दक्षिणी अफ्रीका संग्राम पर एक लम्बी काव्य रचना 'निःशस्त्र सेनानी' शीर्षक से लिखी थी। यह कविता महात्मा गांधी पर सर्वप्रथम मानी गयी है जिसकी बानगी रूप में उसकी दो पंक्तियाँ प्रस्तुत हैं :

पूज्यतम कर्म-भूमि स्वच्छन्द,
मची है डट जाने की धूम।
दहलता नभ मंडल ब्रह्माण्ड,
मुक्ति के फट पड़ने की धूम।

डॉ. दुबे का एक पत्र सन् 1995 में 'महात्मा गांधीजी पर पहली कविता' ऐतिहासिक तथ्यों पर आधारित मुझे मिला। उस पत्र से डॉ. दुबे की खोजपूर्ण जानकारी की झलक भी मिलती है। आज वह हमारे मध्य नहीं हैं किन्तु स्मृतियाँ जीवित हैं उनके लिखे पत्र में—

''आज राष्ट्रपिता तथा राष्ट्रभाषा—दोनों ही विवाद के घेरे में हैं। राष्ट्रपिता के साथ राष्ट्रभाषा का गहरा अटूट तथा अपूर्व सम्बन्ध है। महात्मा गांधी और बाबा साहब अम्बेडकर कभी नहीं लड़े परन्तु आज राष्ट्रपिता पर बौछारें हो रही हैं परन्तु बापू के व्यक्तित्व पर खरोच नहीं आनेवाली है और न उनको अब किसी प्रमाण पत्र अथवा प्रशस्ति-पत्र की आवश्यकता है। राष्ट्रपिता का सर्वप्रथम अभिनन्दन राष्ट्रभाषा ने ही किया है। समूचे भारत में और समस्त भारतीय भाषाओं में महात्मा गांधी पर प्रथम कविता राष्ट्रभाषा पर ही लिखी गयी। पं. माखनलाल चतुर्वेदी ''एक भारतीय आत्मा'' (जो कि बाद में कानपुर की ''प्रभा'' तथा ''प्रताप'' के सम्पादक भी रहे) ने सन् 1913 में 'निःशस्त्र सेनानी' शीर्षक के बापू पर सर्वप्रथम कविता लिखी जिसे कानपुर के अमर शहीद गणेशशंकर विद्यार्थी ने 'प्रताप' में प्रकाशित किया। सन् 1914 में माखनलाल चतुर्वेदी ने 'हृदय' शीर्षक से गांधीजी पर दूसरी कविता लिखी। जिसे हुतात्मा गणेशशंकर विद्यार्थी ने 'प्रताप' के विजयादशमी विशेषांक में छापा। 1913-14 में महात्मा गांधी दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रह आंदोलन कर रहे थे। उनका राष्ट्रीय मंच पर 1920 में आगमन होता है और भारत में 1915 में स्वदेशागमन। इस प्रकार राष्ट्रभाषा के राष्ट्रकवि ने राष्ट्रपिता को सात वर्ष पूर्व ही अपने काव्य का नायक बना लिया था। यह मेरी पचीस वर्ष की अनवरत खोज तथा शोधकार्य का सुफल है। मैंने इस खोज को गुजरात सरकार को भी प्रेषित कर दिया है। 1920 के बाद से तो महात्मा गांधी पर सहस्राधिक कविताएँ लिखी गयीं। 1914 में ही अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध ने खड़ी बोली के प्रथम महाकाव्य 'प्रिय प्रवास' के नायक श्री कृष्ण में दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रही गांधी की प्रतिच्छाया को समाविष्ट किया है। 1914 में ही राष्ट्रकवि मैथलीशरण गुप्त के महाकाव्य 'साकेत' का भी रचनारम्भ हुआ जिस पर गांधीजी, गांधी युग, गांधी दर्शन तथा राष्ट्रीय आंदोलन का सुस्पष्ट एवं व्यापक प्रभाव है। दक्षिण अफ्रीका के काव्य-केन्द्र गांधी को आज दक्षिण अफ्रीका के राष्ट्रपति डॉ. नेलसन मण्डेला के साथ सम्प्रक्त किया जा सकता है।

गांधीजी हिन्दी कविता में 1913 से 1920 तक सिर्फ मिस्टर गांधी ही थे। 1920 में वे 'कर्मवीर गांधी' बने। परवर्ती काल में वे महात्मा, बापू, राष्ट्रपिता तथा विश्ववंद्य महामानव बन गये। गांधीजी पर जितने शोकगीत लिखे गये—उतने बीसवीं शताब्दी में किसी राजनेता या महापुरुष पर नहीं लिखे गये। हम कह सकते हैं—

बापू/तुम्हारा वृत्त स्वयं ही काव्य है/
कोई कवि बन जाए सहज सम्भाव्य है।

वस्तुतः मेरी दृष्टि में रामराज्य स्थापना के संकल्पकर्ता बापू के प्रिय राम गीतों के संरक्षक सेनानी कवि पं. रामनरेश त्रिपाठी की कविता 'राम कहाँ मिलेंगे?' की पंक्तियों में—
ना मंदिर में न मस्जिद में, ना गिरजे के आसपास में। ना पर्वत पर ना घर बैठे ना प्रार्थना गाने में ना बाने में, ना आँसू ना ह्रास में। खोज ले कोई राम मिलेंगे, दीन जनों की भूख-प्यास में। ❑

गांधीजी का कांग्रेस परित्याग

❑ रामशंकर यादव/बिन्दा भाई

कांग्रेस पार्टी के भीतर महास्वार्थी कट्टरपंथी सनातनी परम्परावादी, सामन्ती राजे-महाराजे, जमींदार तथा कुलीन कहे जाने वाले निकृष्ट लोगों की एक जमात थी। जो अपने-अपने स्वार्थों के हितों के लिए अपनी उपस्थिति दर्शाते थे। कांग्रेस के प्रगतिशील रचनात्मक कार्यक्रमों को बाधित करते थे। गांधीजी ऐसी जमात से स्वयं को मुक्त करना चाहते थे। जब उन्होंने 7 नवम्बर 1933 को हरिजन यात्रा प्रारम्भ की तो पग-पग पर इन्हीं सनातनी हिन्दुओं ने परोक्ष रूप से गांधी की हरिजन यात्रा को असफल बनाने का भरपूर प्रयत्न किया और जब गांधी 25 जून 1934 को पूना म्यूनिसिपैलिटी का मानपत्र ग्रहण करने के लिए दो मोटरों के काफिले में जा रहे थे। एक कट्टरपंथी धर्मांध हिन्दू ने उनके दल पर बम फेंका। गांधीजी तो साफ-साफ बच गये पर सात लोगों को गंभीर चोटें आयीं। इस पर गांधीजी ने कहा था। शहीद होने की मेरी जरा भी इच्छा नहीं है। लेकिन अपने विश्वास की रक्षा और कर्तव्य का पालन करने के लिए मुझे मरना भी पड़े तो मैं उसे अपना सौभाग्य समझ कर हृदय से स्वीकार करूँगा। उस समय गांधीजी को दोहरी मार झेलनी पड़ रही थी। एक तरफ धुर कट्टरपंथी सनातनियों का विरोध तथा दूसरी ओर डॉ. भीमराव अम्बेडकर समर्थकों की आलोचना लेकिन गांधीजी ने जिस उद्देश्य को सामने रखकर हरिजन यात्रा की थी, उसमें वे पूर्ण सफल रहे थे। इस यात्रा ने संपूर्ण भारत में हरिजनों के प्रति संवेदना जागृत कर दी थी। हजारों मंदिरों ने दलितों के दर्शनार्थ अपने दरवाजे खोल दिये थे। लोगों में हरिजनों के प्रति सम्मान की बराबरी की भावना जगायी। यह गांधीजी का लौकिक चमत्कार ही था कि दलितों के लिए सहानुभूति व संवेदना ने जन्म लिया। क्योंकि अभी तक वे घृणा व अपमान की ही जिन्दगी जी रहे थे। इस संवेदना ने आगे चलकर राष्ट्र के लिए महत्त्वपूर्ण स्थान ग्रहण किया। आज तक इसके लिए इतिहास अपनी गवाही दे रहा है। सनातनियों की गांधीजी के आगे एक न चली। धर्म की दुहाई देते हुए गांधीजी ने कहा—ईश्वर ने किसी को छोटा बड़ा नहीं बनाया। ऊँच-नीच की भावनाओं को धर्म के नजरिये से देखना पाप है। यह तो भ्रमित धर्मावलम्बियों का पाखण्ड है। छुआछूत आदि हिन्दू धर्म से न मिटायी गयी तो हिन्दू धर्म स्वयं अपनी कब्र खोदेगा और उसी कब्र में दफन हो जायेगा। गांधीजी को बड़ी पीड़ा पहुँची। उन्होंने कहा, आज दलितों के प्रति सनातनियों में कोई करुणा नहीं दिखती और कांग्रेस पार्टी के भीतर से कोई जोरदार प्रतिरोध न मिलने के कारण मेरे रचनात्मक कार्य को कोई स्वरूप नहीं मिल पा रहा है। क्या ही अच्छा हो कि हम कांग्रेस का परित्याग कर दें। उन्होंने अपने भीतर अपनी अंतरात्मा की आवाज को पकड़ा और दृढ़ निश्चय के साथ स्वीकार किया कि हमें अब कांग्रेस को त्याग देना चाहिए। बहुत हो चुका। क्योंकि कांग्रेस को सत्ता की भूख मिटानी है और हमें नये भारतीय समाज की रचना करनी है। जिसमें घृणा के स्थान पर प्रेम, विरोध के स्थान पर सहयोग तथा आपसी भाईचारे वाला समाज चाहिए जिसमें सभी धर्मों, सम्प्रदायों के लोग कंधे-से-कंधा मिलाकर अपना जीवन सुख और शांति से गुजार सकें। कांग्रेस को अहिंसा पर विश्वास नहीं है। सत्य के वास्तविक स्वरूप को आज तक पहचाना नहीं है। साधन और साध्य दोनों की पवित्रता बनी रहे इस पर कांग्रेस गंभीर नहीं है। वह साम्यवादियों के हिंसात्मक दर्शन पर चलना चाहती है जिसका विश्व को कोई संदेश नहीं जाता। अहिंसा वह रास्ता है जो सम्पूर्ण विश्व को संदेश देगा कि हमारे अपने अधिकारों के लिए अहिंसात्मक संघर्ष ही सर्वोपरि है। जिसमें अपना कोई विरोधी नहीं है। सभी तो अपने ही हैं। प्रेम, सत्य, अहिंसा के सहारे हम अपने विरोधी के आचरण को हृदय-परिवर्तन के द्वारा अपना बना लेंगे और वह पूर्व के प्रति आचरण को पश्चात्ताप कर हमारा अपना बन जायेगा। यह था गांधीजी का दर्शन जो बाद में सम्पूर्ण विश्व ने हृदय से स्वीकार किया। उन्होंने लिखा है कि अब मैं कांग्रेस पर अनुचित दबाव नहीं डालूँगा। अब अकेले ही रचनात्मक कार्य करूँगा और यह विश्वास रखूँगा कि जो बात आज मैं अपने देशवासियों को नहीं समझा सकता वह किसी दिन अपने आप उनकी समझ में आ जाएगी। उपरोक्त मतभेदों के होते हुए गांधी ने अपनी बात को स्पष्ट करते हुए कहा, कांग्रेस के लोगों में मेरे प्रति विश्वास न होते हुए भी मुँह से हामी भरते हैं अतः इनसे कोई कार्य परिणत नहीं हो सकता और रचनात्मक कार्यक्रमों की सफलता के अलावा मेरे पास कोई दूसरी योजना नहीं है। मेरे कार्यक्रम मुख्यतः ये हैं—

1. अस्पृश्यता निवारण
2. सम्पूर्ण मद्य निषेध
3. हिन्दू-मुस्लिम एकता
4. चरखा, खादी व ग्रामोद्योग
5. सात लाख गाँवों का संगठन

1. अस्पृश्यता निवारण

कांग्रेसी इसके समर्थन में उदासीन दिखे। हजारों साल से जिनके प्रति घृणा-भाव रखते आये हैं का हृदय परिवर्तन करना बहुत

ही पीड़ादायक लगा। छुआछूत के कार्यक्रमों से सर्वथा अपने आपको पृथक रखा। लेकिन इसके बावजूद गांधीजी को सुभद्रा कुमारी चौहाना जैसे कार्यकर्ताओं की जरूरत थी जिन्होंने अपनी थाली में एक दलित बालक को बैठाकर सम्मान के साथ भोजन कराया था। क्योंकि कांग्रेसियों ने मध्य प्रदेश की एक सभा मंच से उसे उठा दिया था। वह बालक अच्छा कार्यकर्ता होते हुए भी उसे सम्मानपूर्वक बैठने को न कह कर भगा दिया था।

2. सम्पूर्ण मद्यनिषेध

जिस मद में चूर होकर यादव कुल का विनाश हुआ था। उस शराब का पूर्ण निषेध हो जो किसी भी समाज को भ्रष्ट कर हिंसाचार को बढ़ावा देती हो, क्योंकि शराबी का व्यवहार अपनी स्त्री व बच्चों के प्रति अच्छा नहीं रहता। शिक्षा के अभाव में शराब भुक्तभोगी समाज अपने को गतिशील नहीं रख पाता है। क्योंकि सम्भ्रान्त उच्च कुल तथा सामन्ती वर्ग का आम आचरण शराबमय था। फिर भला वह गांधीजी के मद्यनिषेध को कैसे स्वीकार करता? शराब पीना और पिलाना ही इनका उच्च आदर्श था।

3. हिन्दू-मुस्लिम एकता

राष्ट्रीय एकता तथा अखण्डता के लिए गांधीजी दोनों धर्मों के मध्य उत्तम व्यवहार तथा विश्वास की वकालत करते थे। क्योंकि तिलक जैसे हिन्दू नेता ने लखनऊ में 1916 में ही स्वीकार कर लिया था कि भारत में दो राष्ट्र मजबूरी में साथ-साथ रह रहे हैं। यही वह प्रस्ताव था जो आगे चलकर भारत विभाजन का कारण बना और हिन्दुओं ने विभाजन के लिए दोषारोपण गांधीजी पर ही किया। गांधीजी जानते थे कि हिन्दू-मुस्लिम एकता के बिना राष्ट्र कभी प्रगति नहीं कर सकता। आपसी वैर, घृणा, द्वेष के रहते कलह के ही दर्शन होंगे। दोनों सम्प्रदाय अपने विश्वासों को सींचते रहे, परिणाम वही निकला जिसकी गांधीजी को आशंका थी।

4. चरखा, खादी व ग्रामोद्योग

अंग्रेजों ने हिन्दू समाज में सबसे पहले जो कार्य सम्पन्न किया वह था कि उन्होंने ग्रामीण व लघु उद्योगों की मशीन के अवतरण के द्वारा नष्ट करा दिया। गाँवों में भुखमरी-कंगाली का जो भीषण स्वरूप प्रकट हुआ वह भारतवासियों के लिए एक लम्बे समय के लिए गुलामी का कारक बन गया, जिसे हम आज भी अपने सर पर लादे आ रहे हैं। गांधीजी का मानना था कि ग्रामों को स्वावलंबी बनाना हमारा कर्तव्य बनता है। हम गाँवों की अनदेखी नहीं कर सकते। गाँव के गरीब, मजदूर, किसान व आदिवासी अपने पैरों पर खड़े हों, मेरा ऐसा कर्तव्य बनता है। उन्हें उनकी रोटी सुरक्षित दिखे, यही मेरी आत्मा चाहती है। इसी आधारशिला पर ही हमारा भारत अपना सीना तानकर दुनिया के सामने खड़ा हो सकता है। इसी पृष्ठभूमि में गांधी द्वारा बनी खादी राष्ट्र की पहचान बन गयी थी। खादी कार्यक्रम इस कदर आम जनता ने स्वीकारा कि इंग्लैण्ड की कपड़ा मिलें (लंकाशायर की) बंद हो गयीं। यही नहीं बम्बई में लगभग इतनी ही मिलें अपना दम तोड़ चुकी थीं। नंगा भारत खादी की ओट में सम्मानपूर्वक चलने लगा। यह कोई कम आश्चर्यजनक काम नहीं था। लेकिन कांग्रेसियों ने खादी फैशन के रूप में अंगीकार किया। गांधीजी मर्माहत हो गये। जिनको पाठ स्वदेशी का पढ़ाना चाहते थे वे गांधी को अपना पाठ पढ़ाने लगे। गांधी के सामने कोई विकल्प नहीं रह गया था सिवा कांग्रेस के परित्याग के।

5. सात लाख गाँवों का पुनर्गठन

वे चाहते थे कि कांग्रेस गाँवों के निर्माण के लिए अपनी शक्ति का उपयोग करे। लेकिन कांग्रेस मुख्यतः पं. जवाहरलाल नेहरू व अन्य नेता गांधीजी के सपनों का भारत नहीं चाहते थे। क्योंकि उनके अंदर सोवियत रूस की औद्योगिक नीति ने अपना कौशल दिखा दिया था। लिहाजा वे गांधी को केवल आजादी के लिए उपयोग कर रहे थे। वे जनता के सुख-दुख से दूर सत्ता की गलियों में अपना जीवन देख रहे थे। गांधीजी देख रहे थे कि गाँवों में भारत की अधिकांश जनता निवास करती है। उसके सुख के लिए हमें तत्पर रहना चाहिए। उनकी उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। वे जानते थे कि गाँवों में नयी समाज व्यवस्था के लिए छुआछूत को जड़ समूह से नष्ट करना अनिवार्य है। अन्यतः डॉ. भीमराव अम्बेडकर का कथन ही सही साबित होगा कि जब तक हिन्दू धर्म में जातिगत ऊँच-नीच की भावना है तब तक हिन्दू समाज न उदार बन सकता है और न ही उसमें सामाजिक समानता स्वतंत्रता तथा बंधुत्व के दर्शन हो सकते हैं। सामाजिक मूल्यों में परिवर्तन एक मजाक सा लगता है। सच तो यह है कि कांग्रेस साम्यवादियों के भ्रामक जाल में फँस गयी थी। जहाँ से निकलना कांग्रेस के लिए असम्भव था। इसलिए गांधीजी अपने विचारों पर अटल रहे और 28 सितंबर 1934 को कांग्रेस के बम्बई अधिवेशन के दिन अपने आपको कांग्रेस से अलग कर लिया। यह दृश्य बड़ा ही हृदयस्पर्शी था। सभा में लगभग 8 हजारा लोगों का समुदाय गांधीजी के सम्मान में अपना आदर प्रकट करने के लिए खड़ा हुआ। अधिवेशन ने उनके प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट करते हुए कहा कि यह कांग्रेस गांधीजी के नेतृत्व में पुनः अपना विश्वास प्रकट करती है। यद्यपि वह उनके निश्यों की अनिच्छापूर्वक स्वीकार करती है तथापि उन्होंने राष्ट्र की जो अपूर्व सेवाएँ की हैं, उनके लिए अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करती है। कांग्रेस यह भी कृतज्ञता प्रकट करती है कि जब-जब उनकी सलाह और मार्गदर्शन की जरूरत होगी वह उसे सदा उपलब्ध होगा।''

गांधीजी के अस्पृश्यता के रचनात्मक कार्यक्रमों से सनातनी हिन्दू धर्मावलम्बियों को घृथा थी। इसी घृणा के रहते 25 जून को (1934) पूना में तथा 30 जनवरी 1948 को दिल्ली में उन पर आक्रमण किया। दुनिया में सबसे बड़ा झूठ प्रचारित किया कि गांधीजी की हत्या पाकिस्तान को बँटवारे में 55 करोड़ रुपये दिये जाने की उनकी माँग के लिए की गयी थी, लेकिन सच आज भारत के सामने है। यह सब गांधीजी को पूर्व अनुभव था कि मेरी मौत कृष्ण व ईसामसीह सी होगी।

संदर्भ

1. सुभद्रा कुमारी चौहान, लेखक डॉ. प्रतीक मिश्र, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ।
2. बापू कथा, लेखक हरिभाऊ उपाध्याय, सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)
3. महात्मा गांधी एक जीवनी, लेखक वी. आर. नन्दा, सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन, कनात सरकस, नई दिल्ली।

... पृष्ठ 4 का शेष

परतंत्र थे, तब हम लोग वालिंटियर थे, पर आज वह जमाना नहीं रहा। आज हम लोग राज्य-कर्ता बन गये हैं।

स्वयंभू 'प्रतिनिधि'

लोगों से मत प्राप्त कर उनके प्रतिनिधि असेम्बलियों में, पार्लियामेंट में जाते हैं। पर रचनात्मक कार्यकर्ताओं के लिए बापू ने पार्लियामेंट में जाना निषिद्ध माना था। क्योंकि पार्लियामेंट में जानेवाले 'निर्वाचित प्रतिनिधि' हैं। हम भी तो लोक-प्रतिनिधि हैं ही। पर हम हैं ''स्वयंभू प्रतिनिधि''। गरीब जनता का प्रतिनिधित्व हमने खुद अपने कंधों पर ले लिया है। बापू के इस खयाल का भी हमें स्मरण कर उसके अनुसार अपना जीवन बनाने की कोशिश करनी चाहिए।

प्रस्तुति : बद्रीनाथ सहाय

वीरान करते राजपथ

❑ **भारत डोगरा**

हिमालय में हाईवे (राजपथ) विस्तार का महत्त्वाकांक्षी दौर आरम्भ हो चुका है। उदाहरण के लिए केवल जून के महीने में ही केन्द्रीय सरकार ने हिमाचल प्रदेश के लिए जितने नये हाईवे बनाने की या पहले के हाईवे को चौड़ा करने की परियोजनाओं की घोषणा की है, उतनी पहले कभी नहीं हुईं। इतनी परियोजनाओं की एक साथ घोषणा से राज्य में हैरानी है। हालाँकि इसे केन्द्रीय सरकार द्वारा एक बड़े उपहार व विकास की बड़ी उपलब्धि के रूप में प्रचारित किया जा रहा है, पर जो लोग इसके पहले के अनुभवों से परिचित हैं वे ऐसे सवाल भी उठा रहे हैं कि इस पूरी प्रक्रिया में कितने पेड़ कटेंगे व कितने लोगों की जमीन छिनेगी या अन्य छोटे स्तर के रोजगार उजड़ेंगे।

इन सम्भावनाओं की गम्भीरता को जानने के लिए कालका-शिमला हाईवे को चौड़ा करने व 4-लेन कार्य के हाल के अनुभवों को देखा जा सकता है। हाल के समय में इस हाईवे पर टिंबर ट्रेल से लेकर सोलन तक हाईवे को चौड़ा करने का कार्य तेज हुआ है। इस बारे में सूचना के अधिकार के अंतर्गत जानकारी माँगने पर एक सामाजिक कार्यकर्ता को यह उत्तर मिला कि 31 मार्च 2016 तक लगभग दस हजार पेड़ काटे गये। यदि यह मान लिया जाए कि सरकारी आँकड़ों में कोई कम जानकारी नहीं दी गयी है तो भी सवाल उठता है कि इस हाईवे को चौड़ा करने का काम पूरा होने तक आखिर कितने पेड़ों की बलि देनी होगी? स्थानीय लोगों ने बताया कि यदि छोटे पेड़ों को भी गिना जाए तो वास्तव में इनकी गिनती कई गुना अधिक होगी।

आसपास के अनेक दुकानदारों की जमीन छिनने के कारण या इसके नोटिस मिलने के कारण भी बहुत से स्थानीय लोग चिन्ताग्रस्त हैं। सूखी जोरी के पास के एक दुकानदार विनोद कुमार ने बताया कि जमीन के अधिग्रहण से उनकी आजीविका पर बहुत प्रतिकूल असर पड़ेगा व मुआवजा भी कम मिल रहा है। उन्होंने यह भी बताया कि स्थानीय अर्थव्यवस्था में हाईवे के आसपास की छोटी दुकानों की बड़ी भूमिका है और ये दुकानें उजड़ने से स्थानीय अर्थव्यवस्था पर बहुत प्रतिकूल असर पड़ेगा।

इस हाईवे को चौड़ा करने का औचित्य विभिन्न वाहनों की आवाजाही को तेज करना है, पर स्थानीय लोगों ने बताया कि चौड़ा करने की प्रक्रिया में जो कुछ हो रहा है व जिस तरह पेड़ कट रहे हैं उससे तो भूस्खलन का खतरा बढ़ रहा है। भूस्खलन अधिक होंगे तो बार-बार हाईवे अवरुद्ध होने की संभावना बढ़ जायेगी। ट्रैफिक भी तब तक रुका रहेगा जब तक भूस्खलन का मलबा हट न जाए। स्थानीय गाँववासियों की समस्याएँ जो बढ़ेंगी वह चिन्ता अलग से है। इस सड़क पर वर्षों से गाड़ी चला रहे एक स्थानीय कार चालक रवीन्द्र ने बताया, ''जिस तरह हाईवे चौड़ा किया जा रहा है, उससे समस्याएँ बढ़ेंगी, कम नहीं होंगी।''

हाईवे किनारे के एक छोटे दुकानदार ने कहा, ''जिस तरह पहले यहाँ पहाड़ों में प्रवेश करते ही पर्यटक को ठंडी हवा मिलती थी, छाया मिलती थी, इतने पेड़ उजड़ते रहे तो वह आनेवाले दिनों में नहीं मिल पाएगी।'' दिल्ली से पर्यटक लानेवाले कार चालक रंजीत ने बताया, ''पर्यटक तो→

उपवास का महत्त्व

❑ महात्मा गांधी

एक डॉक्टर सज्जन हैं। वे कुछ परिस्थितियों में उपवास को उपयोगी मानते हैं। उन्होंने मुझे अपने उपवास के दिनों में, जिन-जिन परिणामों की अनुभूति हुई है, उन्हें प्रकाशित कर देने के लिए पत्र लिखा है। मैं डॉक्टर महोदय के प्रस्ताव को स्वीकार करता हुआ अपने अनुभव को सहर्ष प्रकाशित कर रहा हूँ, क्योंकि वे पर्याप्त महत्त्व के हैं। मैंने जितने भी उपवास किये हैं, करीब-करीब वे सभी नैतिक दृष्टि से किये हैं, फिर भी, भोजन के सम्बन्ध में एक अत्यन्त दृढ़ सुधारक होने के नाते और उन्हें कुछ असाध्य रोगों के निवारण में उपयोगी होने का निमित्त माने के कारण उससे शरीर पर स्वीकार कर लेना चाहिए कि इसके सम्बन्ध में मेरा अवलोकन एकदम नीरन्ध्र नहीं है। इसका कारण सिर्फ यही है कि उन दोनों बातों को एक साथ पूरा-पूरा देखना मेरे लिए असम्भव था। मैं उसके नैतिक मूल्य के विचार में ही इतना व्यस्त था कि उसके शरीर सम्बन्धी परिणामों पर ध्यान देना सम्भव नहीं था। इसलिए मैं अपने मन पर उनकी जो सामान्य छाप पड़ी है केवल उसे ही दे पा रहा हूँ। उसके ठीक-ठीक परिणामों को जानने के लिए मैं पत्र प्रेषक से कहना चाहता हूँ कि डॉ. अन्सारी और डॉ. अब्दुर्रहमान से पूछताछ करें। उन्होंने गत वर्ष मेरे उपवास की सम्पूर्ण अवधि में मेरी पूरी सार-सँभाल रखी थी। उन्होंने बहुत परिश्रम से काम किया था। वे हर समय मेरे पास रहते थे और उन्होंने दिलोजान से मेरी सेवा सुश्रुषा की थी।

सबसे पहले तो मैं, अपने दूसरे अधिक लम्बे उपवास की समाप्ति पर होनेवाले कष्टों का उल्लेख कर देना चाहता हूँ। मैंने 1914 में दक्षिण अफ्रीका में 14 दिन का उपवास किया था। उपवास की समाप्ति के बाद दूसरे ही दिन से यह समझकर कि उससे मेरी कुछ भी हानि न होगी मैंने तेज रफ्तार से घूमना शुरू कर दिया। दूसरे या तीसरे दिन लगभग तीन मील पैदल चला और टांगों की मांसहीन पिंडलियों में बहुत जोर का दर्द होने लगा। मैं उस दर्द का कारण न समझ सका, परन्तु ज्यों ही यह दर्द बन्द हुआ, मैंने फिर घूमना शुरू कर दिया। मैं इसी हालत में, दक्षिण अफ्रीका से इंग्लैण्ड गया। वहाँ मुझे डॉ. जीवराज मेहता ने देखा। उन्होंने मुझे सचेत करते हुए कहा कि यदि इसी प्रकार घूमना कायम रखा गया तो जिन्दगी भर के लिए पंगु बन जाने का खतरा है। उन्होंने मुझे कम से कम 14 दिन लेटे रहने और आराम लेने की सलाह दी। लेकिन यह चेतावनी मुझे देर से मिली और मेरी तन्दुरूस्ती बिगड़ गयी। इसके पहले मेरा स्वास्थ्य बड़ा अच्छा था। मैं 40 मील बिना बहुत थकावट महसूस किये पैदल चल लिया करता था। 20 मील चलना तो मेरे लिए कुछ बात ही नहीं थी। अपने अज्ञान के कारण मैंने जो बहुत ज्यादा परिश्रम किया उसके कारण मेरी नसों में सख्त दर्द होने लगा। और मैंने अपने अच्छे भले स्वास्थ्य को सदा के लिए बिगाड़ लिया। मेरे जीवन में किसी भारी रोग से ग्रसित होने का यह पहला ही मौका था। इतना मूल्य चुकाकर मुझे जो अनुभव हुआ उससे मैंने यह सीखा कि उपवास के दिनों में शरीर को सम्पूर्ण आराम देना चाहिए और उपवास के बाद भी उपवास के दिनों के प्रमाण में, कुछ दिन आराम लेना अत्यन्त आवश्यक है। यदि इतने सादे से, नियम का यथाविधि पालन किया जाये तो फिर उपवासजनित किसी दूसरे बुरे परिणाम की आशंका करने की कोई जरूरत नहीं रहती। निस्संदेह मेरा यह विश्वास है कि सुव्यवस्थित ढंग से किया गया उपवास शरीर को लाभ पहुँचाता है। उपवास के दिनों में शरीर अनेक अशुद्धियों से मुक्त हो जाता है। गत वर्ष उपवास के दिनों में और इस

→हरियाली की तलाश में आते हैं, उन्हें अब जगह-जगह कटे पेड़ व गिरे पत्थर मिल रहे हैं।''

हाईवे चौड़ा करने की प्रक्रिया में कई जगह बहुत लुढ़के हुए बड़े-बड़े पत्थर नजर आते हैं तो कई जगह धूल उड़ती दिखाई पड़ती है। जब यह लेखक कालका से धर्मपुर की ओर जा रहा था तो अचानक एक कर्मचारी ने गाड़ी रुकवा दी। शीघ्र समझ में आया कि मामला क्या है। एक पेड़ काटा जा रहा था। कुछ देर बाद बड़ी आवाज करता हुआ एक पेड़ धरती पर गिरा। एक कर्मचारी के इशारा करते ही कई मजदूर इसकी ओर तेजी से लपके व शीघ्र ही इसकी शाखाएँ व पत्ते काट डाले गये व हरा-भरा पेड़ शीघ्र ही मात्र लकड़ी के लट्ठे में बदल गया। इस तरह धर्मपुर से आगे सोलन की तरफ निकली सड़क पर जाने पर फिर एक कर्मचारी ने गाड़ी रुकवा ली। हमने देखा कि सामने सड़क पर तेजी से बड़े-बड़े पत्थर भूस्खलन के कारण ऊपर से लुढ़क कर आ रहे हैं। अन्य स्थानों पर भी ऐसे भूस्खलन नजर आए।

हाईवे का प्रसार आरम्भ करने से पहले यह भलीभाँति समझना जरूरी है कि इससे हिमालय क्षेत्र के पर्यावरण व आजीविकाओं पर क्या असर पड़ेगा। (सप्रेस)

उपवास के अवसर पर भी, शुरू के उपवासों के विपरीत, मैं नमक और सोडा डालकर पानी पी लेता था। मुझे यह अनुभव हुआ कि पर्याप्त से अधिक पानी पीते रहने से आमाशय स्वच्छ रहता है और मुँह नहीं सूखता। तीन छटाँक या पावभर पानी में पाँच ग्रेन नमक और उतना ही सोडा डाला जाता था और मैं 6-8 दफे में सवा सेर या डेढ़ सेर के करीब पानी पी लेता था। मैं नित्य बिना नागा 'एनिमा' भी लेता था। करीब पौन पिन्ट पानी में लगभग 40 ग्रेन नमक और उतना ही सोडा घोल दिया जाता था। एनिमा में गुनगुना पानी ही काम में लाया जाता था। नित्य बिस्तर में ही गीले कपड़े से मेरा बदन पोंछ दिया जाता था। गत वर्ष के और इस वर्ष के उपवास के दिनों में भी मुझे रात्रि में अच्छी नींद आ जाती थी और मैं दिन में भी आधा घंटा सो लेता था। पिछले उपवास के समय तो प्रथम तीन दिन तक मैं करीब-करीब सुबह चार बजे से लेकर रात के आठ बजे तक काम कर लेता था। जिस बात को लेकर उपवास करना पड़ा था, उस बात पर चर्चा भी करता रहता था और अपना पत्र व्यवहार और सम्पादन कार्य भी मैंने जारी ही रखा। चौथे दिन मेरे सिर में जोर का दर्द हुआ, काम करना असम्भव हो गया और उसी दिन दोपहर से मैंने सारे काम बन्द कर दिये। दूसरे ही दिन मुझे अच्छा मालूम होने लगा। थकावट दूर हो गयी और सिर का दर्द भी करीब-करीब जाता रहा। छठे दिन और भी ताजगी मालूम होने लगी और सातवें दिन जो मेरे मौन का दिन था, मैं ऐसा ताजा और शक्तिवान हो गया कि मैं उस दिन उपवास सम्बन्धी अपना लेख भी लिख सका था और लिखते समय हाथ ही नहीं कांपा था।

मुझे यह याद नहीं कि उपवास के दिनों में मुझे भूख की पीड़ा होती थी या नहीं। उपवास खोलने के समय तो मुझे कोई उतावली न थी। मुझे जिस समय उपवास खोलना चाहिए था उनसे आधा घंटा विलम्ब करके ही मैंने उपवास खोला था। उपवास के दिनों में कताई में भी कोई कठिनाई मालूम नहीं होती थी। मैं तकिये के सहारे बैठकर रोज लगभग आधा घंटा से भी ज्यादा देर तक अपनी मामूली गति के साथ चरखा चला लेता था। रोज के तीनों समय की आश्रम प्रार्थना में शरीक होना बन्द करने की जरूरत भी नहीं पड़ी थी। अन्तिम चार दिन तो मुझे चारपाई में लिटाकर प्रार्थना स्थल पर ले जाया गया था। चाहता तो मैं वहाँ बैठ भी सकता था, लेकिन मैंने उस समय अपनी शक्ति को बचाये रखना ही ठीक समझा। मुझे कुछ अधिक शारीरिक कष्ट भोगना पड़ा हो, सो याद नहीं है। हाँ, एक बात जरूर याद है, बीच-बीच में जी मिचलाता था। लेकिन पानी का घूँट लेने पर अकसर आराम हो जाता था।

मैंने लगभग छह औंस संतरे और अंगूर का रस लेकर उपवास खोला था। एक नारंगी भी चूसी थी। दो घंटे बाद फिर मैंने यही किया। इस बार 10 अंगूर ज्यादा अंगूरों का रस धीरे-धीरे चूस लिया था फिर कुछ घंटे बाद तीसरे पहर एनिमा लिया। तत्पश्चात् उस दिन मैंने पौन पाव बकरी का दूध, एक छटाँक पानी मिलाकर पीया और उसके बाद एक नारंगी और दस अंगूर खाये थे। दूसरे दिन दूध बढ़ाकर एक छटाँक कर दिया था। पानी तो उसमें हमेशा ही मिलाया जाता था। इस प्रकार डेढ़ सेर दूध तक रोजाना तीन-तीन छटाँक दूध बढ़ाता चला गया। पानी तो अब भी उसमें मिलाया जाता है लेकिन अब दूध की हर एक खुराक में केवल आधी छटाँक पानी ही मिलाया जाता है। कोई डेढ़ दिन तक मैंने खालिस दूध पीकर देखा था, लेकिन उससे कुछ भारीपन महसूस हुआ और खालिस दूध को ही इसका कारण समझकर फिर दूध में पानी मिलाना आरम्भ कर दिया है।

उपवास खोलने के बाद यह लिखते समय आज बारहवाँ दिन है। अब तक मैंने कोई भी ठोस खुराक नहीं ली है। अब भी फलों का कुछ हिस्सा तो मैं रस के रूप में ही लेता हूँ और पिछले तीन दिनों से मैंने अंगूर और संतरों के अलावा पपीता, ककड़ी या चीकू और अनार लेना भी शुरू कर दिया है। एक दिन में मैंने अब तक अधिक से अधिक दो सेर दूध के करीब लिया है। औसतन 1.।। सेर दूध रोज पीता हूँ और कभी-कभी मैं उसके साथ थोड़ी-सी डबल रोटी या पतली सी एक चपाती भी खा लेता हूँ। मैं महीनों तक दूध और फल खाकर रहा हूँ, उस हालत में भी अपने को हमेशा स्वस्थ पाया है।

मेरा वजन जेल से छूटने के बाद अधिक से अधिक 112 पौंड तक पहुँच गया था। इन सात दिनों के उपवास में कोई एक पौंड वजन कम हो गया था। मैंने खोया हुआ तमाम वजन फिर प्राप्त कर लिया है और अब मेरा वजन 103 पौंड से भी कुछ अधिक है। पिछले तीन दिनों से तो मैं सुबह शाम नियमित रूप से व्यायाम भी कर लेता हूँ और उसमें मुझे कुछ भी थकावट नहीं मालूम होती है। समतल जमीन पर चलने में मुझे कोई कठिनाई नहीं होती। हाँ, सीढ़ियाँ चढ़ने या उतरने में कुछ श्रम अब भी मालूम होता है। दस्त भी नियमित रूप से साफ होता है और रात को नींद अच्छी तरह आती है।

मेरी राय में तो उन इक्कीस दिनों के या सात दिनों के इस उपवास के कारण मेरे शरीर को कुछ भी हानि नहीं पहुँची। इन सात दिनों में वजन का बहुत घट जाना कुछ चिन्ताजनक अवश्य था। लेकिन आरम्भ में साढ़े तीन दिनों में मैंने जो कठिन परिश्रम किया था स्पष्टतः वही इसका कारण था। थोड़ और आराम कर लेने पर मैं अपनी पहले जैसी वही शक्ति, जो उपवास के आरम्भ में थी, फिर प्राप्त कर लूँगा और शायद कच्छ में, मैंने जो शक्ति और वजन गँवाया था, वह भी बिना कठिनाई के प्राप्त कर सकूँगा।

जो लोग किसी भी कारणवश उपवास करना चाहें उनके लिए मैं एक औसत दर्जे के आदमी की नजर से और केवल शरीर की दृष्टि से कुछ नियम नीचे दे रहा हूँ।

एक-अपनी मानसिक और शारीरिक शक्ति की संरक्षा आरम्भ से ही करनी चाहिए।

दो-जब उपवास किया जाये तब उपवास के दौरान भोजन की बात नहीं सोचनी चाहिए।

तीन-ठंडा पानी, नमक औरप सोडा डालकर या बिना सोडे या नमक के ही, जितना बने, उतना, मगर प्रति बार थोड़ा-थोड़ा पिया जाये। (पानी खौलाया हुआ, ठंडा किया हुआ और छाना हुआ होना चाहिए) नमक और सोडे से नहीं डरना चाहिए, क्योंकि पानी में स्वतंत्र रूप में ये चीजें रहती ही हैं।

चार-रोजाना गरम पानी में निचोड़े हुए कपड़े से शरीर साफ करवा लेना चाहिए।

पाँच-उपवास के दिनों में नियमित रूप से नित्य एनिमा लेना चाहिए। एनिमा लेने पर जितना मल निकलता है, उसे देखकर आश्चर्य होगा।

छह-यथासम्भव खुली हवा में सोया जाये।

सात-सुबह धूप में बैठें। धूप और हवा में बैठना भी उतना ही शुद्धिकारक है जितना कि स्नान करना।

आठ-उपवास को छोड़कर अन्य किसी भी बात के बारे में विचार किया जा सकता है।

नौ-किसी भी उद्देश्य से उपवास क्यों न किया गया हो, उन अमूल्य दिनों में, अपने सिरजनहार का, उसके साथ के अपने सम्बन्ध का और उसकी अन्य सृष्टि का विचार करना चाहिए। इससे ऐसी-ऐसी बातें मालूम होंगी जिनकी पहले खयाल तक न हुआ होगा।

डॉक्टर मित्रों से क्षमा माँगते हुए, लेकिन अपने अनुभवों का और अपने जैसे दूसरे सनकी लोगों के अनुभवों का पूरा खयाल करके मैं बिना किसी संकोच के यह कहूँगा कि यदि निम्नलिखित शिकायतें हों तो उपवास अवश्य ही किया जाये।

1. कब्जियत, 2. शरीर में रक्त की कमी, 3. बुखार की हरारत मालूम होना, 4. बदहजमी, 5. सिर में दर्द, 6. गठिया, 7. जोड़ों में दर्द, 8. बेचैनी और चिढ़, 9. उदासी, 10. अतिशय आनन्द का अनुभव।

यदि इन रोगों के होने पर उपवास किया गया हो तो डॉक्टर बुलाने की या पेटेंट दवाइयाँ खाने की कोई जरूरत न रहेगी। खाना तभी चाहिए जब भूख लगे और भोजन के योग्य पूरी मेहनत कर ली गयी हो।

(गांधी वांगमय से साभार) ❑

राष्ट्रीय सर्वोदय युवा शिविर

सर्व सेवा संघ (अ. भा. सर्वोदय मंडल) 11 से 15 नवंबर तक डिब्रूगढ़ (असम) में राष्ट्रीय सर्वोदय युवा शिविर आयोजित कर रहा है। 15 से 35 वर्ष के युवक-युवतियाँ शिविर में शामिल हो सकते हैं। शिविर में शामिल होने के इच्छुक निम्न पते पर सम्पर्क कर सकते हैं :-

1. *सर्व सेवा संघ, प्रधान कार्यालय,*
   महादेव भाई भवन, सेवाग्राम-442102,
   जिला-वर्धा (महाराष्ट्र)
   फोन : 07152-284061, 284091,
   मोबाइल : 9428825908
   ई-मेल : sarvasevasangha@hotmail.com
2. *श्री भीमकांत कोंवर, अध्यक्ष, असम सर्वोदय मंडल,*
   उदयपुर चौकीडिंगी, पोस्ट-सी. आर. भवन,
   डिब्रूगढ़-786003 (असम)
   मो. 9435747570/9957497347

-शेख हुसैन,
महामंत्री, सर्व सेवा संघ

सच्चा अध्यात्म

अगर अध्यात्म का अर्थ यह होता हो कि देश की और जनता की वर्तमान समस्याओं के प्रति उदासीन रहा जाय, तो कम-से-कम मुझे तो अध्यात्म की यह परिभाषा मंजूर नहीं है। मैं तो यह मानता हूँ कि जनता की वर्तमान स्थिति को सुधारना, उसकी गरीबी और गुलामी को दूर करना ही हमारा सबसे पहला आध्यात्मिक कर्तव्य है। भारत का अध्यात्म लम्बे समय तक जीवन की समस्याओं से अलग रहकर एक तंग दायरे में ही बन्द रहा है। किन्तु बुद्ध आदि आध्यात्मिक नेताओं ने समय-समय पर व्यक्ति और समाज के तात्कालिक प्रश्नों को अध्यात्म के साथ जोड़ने के प्रयत्न किये हैं। आधुनिक काल में गांधीजी ऐसी आध्यात्मिक विभूति के एक उत्कृष्ट उदाहरण रहे।

('जयप्रकाश' ग्रंथ से) **-जयप्रकाश नारायण**

आत्मीयता के विस्तार का नाम ही मनुष्यता है!

❑ प्रदीप कुमार सिंह 'पाल'

हममें से हर कोई जो भी जहाँ है, जिस किसी स्थान पर है, वह बस, एक ढर्रे का जीवन जिये जा रहा है। जो किया जा रहा है, वह बस, हो रहा है। इस बात को साल बीते, सदियाँ बीतीं, पर हम सभी अर्द्धमूर्च्छित, मूर्च्छित, स्वप्न अथवा सुषुप्ति अवस्था में बने हुए हैं! ऐसा क्यों है? इस सवाल का जवाब ढूँढ़ने के लिए न तो अपने पास समय है और न ही किसी और के पास। बात व्यक्तिगत या अपने निजी जीवन की करें तो हमें आदतें, यादें, संस्कार, रुचियाँ अथवा स्वभाव चलाए जा रहे हैं। जो अपने व्यक्तिगत जीवन में हो रहा है, क्या वह सब उचित है? उसे होना चाहिए या नहीं? इन सबका उत्तर ढूँढ़ने, ढर्रे के जीवन को औचित्य एवं विवेक की कसौटी पर परखने का न तो हममें साहस है और न ही इसकी कोई इच्छा।

व्यक्तिगत जीवन की इस स्थिति से हमारा सामाजिक जीवन भी अलग नहीं है। सदियों एवं युगों के काल-प्रवाह में बहते-बहते कुछ विचित्र-सी संरचना हो गयी है समाज की। परम्पराएँ, रीति-रिवाज, मूढ़ताएँ, मान्यताएँ, विश्वास या अंधविश्वास इसे चलाए हुए हैं। जो हो रहा है, सभी उमसें किसी न किसी अंश में भागीदार हैं। यह भागीदारी तो हम सबके द्वारा बड़े मजे से निभाई जा रही है, परन्तु इस प्रक्रिया में जो विसंगतियाँ, विऔतियाँ पनप चुकी हैं अथवा पनप रही हैं, उस ओर न तो किसी का ध्यान है और न ही ध्यान देने की चाहत। इसके पीछे यदि कोई वजह ढूँढ़ी जाए तो बस, इतनी ही बात है कि हम सोए हुए हैं अथवा मूर्च्छा की मनोदशा हैं। तभी तो हमने स्वयं को व्यक्तिगत व सामूहिक जीवन से काट कर अलग-थलग कर लिया है।

प्रकृति पल-पल कुछ न कुछ बताती, सिखाती और समझाती है। इसकी हवाओं में असाधारण जादुई संदेश है। पर्वत के निर्झर, जल-प्रपात एवं जल-प्रवाह को गतिशीलता देनेवाली नदियाँ भी सत्य व बोध की अनोखी कथा कह रही हैं। भूमि, जल, वायु, अग्नि व आकाश भी हमें बोध का अनमोल उपहार निरंतर बाँट रहे हैं, पर यह सब मिलेगा तो तभी, जब हम होश में हों, जागे हों। जगने, जगाने का जयघोष करके हमें मोहनिद्रा से उठाना और सन्मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करना एवं चला देना ही प्रकृति का उद्देश्य है।

किसी महापुरुष ने कहा है कि जिनका अपना मन केवल अपने शरीर तक ही है, वे कीट-पतंग नीची श्रेणी के हैं; जो अपनी संतान तक आत्मभाव को बढ़ाते हैं, वे पशु-पक्षी की श्रेणी के हैं; जिनका अपनापन कुटुम्ब तक सीमित है, वे असुर हैं, जिनका अहंभाव अपनी संस्था तथा राष्ट्र तक है, वे मनुष्य हैं एवं जो समस्त मानव जाति को अपनेपन से ओत-प्रोत देखते हैं, वे ही परम बौद्धिक हैं तथा जिनकी आत्मीयता चर-अचर तक विस्तृत है, वे जीवन मुक्त परम लोक-सेवी हैं।

जिस व्यक्ति का स्वार्थ जितने छोटे दायरे में है, जितने कम लोगों को अपना समझता है, वह सत्य से उतना ही दूर है। जो आत्मभाव का जितना विस्तार करता है, अधिक लोगों को अपना समझता है, दूसरों की सेवा-सहायता करना अपना कर्तव्य समझता है और उनके सुख-दुख में अपना सुख-दुख मानता है, वह सत्य के उतना ही निकट है।

केवल अपने शरीर तक या स्त्री-संतान तक आत्मभाव का सीमित रहना पापमूलक है। क्योंकि अन्य लोगों को बेगाना समझने से उनका शोषण करने की प्रवृत्ति बलवती होती है। जिनसे हमारा अपना सम्बन्ध नहीं होता, उनकी हानि व लाभ में भी हमें कोई दिलचस्पी नहीं रहती। ऐसी दशा में हम अपनों के लाभ के लिए दूसरों को हानि पहुँचाने में भी जरा संकोच नहीं करते। आत्मीयता का अभाव ही दूसरों को सताने और उनका शोषण करने की छूट देता है; जबकि अपनों के लिए हमेशा त्याग और सेवा करने की इच्छा रहती है।

हमें कुटिलता, अनुदारता, कंजूसी और संकीर्णता को छोड़कर, इनके स्थान पर सरलता और उदारता को अपनाना चाहिए। आत्मभाव, अपनेपन का विस्तार आवश्यक है। इससे हमारे आसपास की उपेक्षित, अप्रिय वस्तुओं का रूप बिलकुल बदल जायेगा और सब कुछ अच्छा व सुखद प्रतीत होगा। यही जीते जी जीवन में स्वर्ग निर्माण की कुंजी है। ❑

सर्वोदय–सांस्कृतिक क्रांति के अरोहण की प्रक्रिया

''जिस सांस्कृतिक क्रांति बिना भारत का एवं भारतीयता का बचना दुष्कर प्रतीत हो रहा है, वह मानवीय क्रांति होगी, आंतरिक क्रांति होगी—ऐसी क्रांति होगी, जिसमें भारत का अध्यात्म व्यक्ति-व्यक्ति के जीवन में उतर आयेगा। तब व्यक्ति अपने हितों का दर्शन समूह के हितों में करने लगेगा। सर्वोदय उसी क्रांति का दूसरा नाम है।''

–जयप्रकाश नारायण

लोकतंत्र की विदाई-बेला

❑ चिन्मय मिश्र

भारत की भाजपा सरकार द्वारा देश के प्रत्येक क्षेत्र में 100 प्रतिशत विदेशी निवेश की स्वीकृति और अभी तक लागू नियम कि 30 प्रतिशत आपूर्ति स्थानीय निर्माण से होगी, को समाप्त कर देने से भारत की आजादी के संघर्ष के दौरान देखे गये सपने को चिरनिद्रा में पहुँचा दिया गया है। अपनी इस असाधारण नीति को मूर्तरूप देते समय उन्हें यह ध्यान में नहीं आया कि भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान केन्द्र (इसरो) ने स्वदेशी तकनीक का प्रयोग कर सारी दुनिया में तहलका मचा दिया है। दुनिया की सबसे संवेदनशील तकनीक के प्रयोग में स्थानीय संसाधनों और कुशलता से महारत हासिल कर पाना भी भारतीय नीति निर्माताओं के गले नहीं उतर पाया। उन्हें तो अब इतना भी भरोसा नहीं रह गया है कि हम भारतीय लोग सब्जी-भाजी का व्यापार भी ठीक से कर सकते हैं। इसलिए वालमार्ट से सब्जी बिकवायी जायेगी। वैसे अम्बानी वगैरह भी सब्जी बेच रहे हैं। वलेकिन उन्हें भी इसमें पारंगत होने में थोड़ा समय है। अतएव सड़क किनारे पत्थर के टुकड़ों से बाट बनाकर और तौलकर बेचनेवाले के इसे बेचने का हक नहीं है। इसके अलावा उस सब्जी विक्रेता की ईमानदारी (पत्थर के बाट के बावजूद) पर शक न करनेवाले ग्राहक को भी तो सजा देना जरूरी है।

बहरहाल समय का एक चक्र पूरा हो गया। हॉलैंड और ब्रिटेन में सन् 1700 ईस्वी के आसपास ईस्ट इंडिया कंपनी की स्थापना हुई और उसने विश्वव्यापी व्यापार प्रारम्भ कर दिया। इनके व्यापार का चमत्कार देखिए कि भारत को पहली बार अपनी स्वतंत्रता बचाने के लिए सन् 1757 में प्लासी का पहला युद्ध लड़ना पड़ा और इसमें हमारी हार हुई। धीरे-धीरे हमारा देश ईस्ट इंडिया कंपनी के हाथ में चला गया और भारत में कंपनी राज स्थापित हो गया। इसके ठीक 100 वर्ष पश्चात् सन् 1857 में भारत का पहला महान स्वतंत्रता संघर्ष हुआ। भारत की इसमें भी हार हुई और ईस्ट इंडिया कंपनी ने सन् 1858 में 40 करोड़ पौंड में भारत को ब्रिटेन के हाथ बेच दिया या हस्तांतरित कर दिया। इस तरह भारत में कंपनी राज तो खत्म हो गया परंतु हम ब्रिटिश उपनिवेश बन गये। इसके 90 वर्ष पश्चात् स्वदेशी व स्वावलंबन की भावना के साथ 15 अगस्त 1947 को हम आजाद हुए। परंतु आजादी के बाद 70 वर्षों में ही हम अपने सामने खड़े अवरोधों से हार मान कर एक बार पुनः हमने आत्मसमर्पण कर दिया और आजादी के 190 सालों के संघर्ष पर पानी फेर दिया। अपने देश पर भरोसा न कर हमने विदेशी प्रत्यक्ष निवेश को अपनाकर यह घोषणा कर दी कि अब हम दुनिया की सबसे खुली अर्थव्यवस्था बन गये हैं (अमेरिका से भी ज्यादा)। हम सभी जानते हैं कि अमेरिका को कौन चलाता है अतएव हमें यह स्वीकार करने में बिलकुल भी संकोच नहीं करना चाहिए कि अब भारत को कौन चलायेगा।

वैसे तो एप्पल के मुख्य कार्यकारी अधिकारी कुक के भारत दौरे के दौरान ही इस नीति पर संभवतः स्वीकृति बन चुकी थी। परंतु सुब्रह्मण्यम स्वामी द्वारा रिजर्व बैंक गवर्नर रघुराम राजन के खिलाफ विषवमन और तदुपरांत राजन द्वारा दूसरा कार्यकाल न लेने की घोषणा से फैली अफरातफरी ने भारत की आर्थिक गुलामी को जल्दी ही ला दिया। इसके लिए वैश्विक कारपोरेट और ऋण न चुकानेवाले (एनपीए) भारतीय स्वामी की आरती गा रहे होंगे। यह तो इतिहास में दर्ज है कि आरएसएस और इसके अधिकांश समर्थकों की भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में कतई कोई भागीदारी नहीं थी। परंतु आजादी के बाद से ही वे स्वदेशी और स्वावलंबन की दुहाई देते रहे हैं। ऐसे में उनकी नरेठी अब सुन्न क्यों है? यह भी अच्छा है कि सन् 2019 में गांधी के जन्म 150 वर्ष पूरे होने के पहले ही भारतीयता, स्थानीयता, स्वावलंबन, स्वराज जैसी तमाम अनुभूतियों का चक्र पूरा हो गया। अब गांधीजी के जन्म की डेढ़ शताब्दी मनाने में सरकार को किसी तरह की हिचकिचाहट महसूस नहीं होगी और अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस की तरह पूरी दुनिया में सज जायेगी। इसकी वजह यह है कि कंपनियाँ तो दुनिया के प्रत्येक राष्ट्र में मौजूद हैं।

गांधीजी कहते थे, *''मेरे सपनों के स्वराज्य में जाति या धर्म के भेदों का कोई स्थान नहीं हो सकता। उस पर शिक्षितों और धनवानों का एकाधिपत्य नहीं होगा। यह स्वराज्य सबके लिए, सबके कल्याण के लिए होगा। सबकी गिनती में किसान तो आते ही हैं, किन्तु लूले-लंगड़े, अंधे और भूख से मरनेवाले लाखों-करोड़ों मेहनतकश मजदूर भी अवश्य आते हैं।''* (यंग इंडिया 26 मार्च, 1931)। इसी अंक में उन्होंने यह भी कहा है, *''स्वराज्य की मेरी कल्पना के विषय में किसी को कोई गलतफहमी नहीं होनी चाहिए। उसका अर्थ विदेशी नियंत्रण से पूरी मुक्ति और पूर्ण आर्थिक स्वतंत्रता है।''* परंतु हम तो एक ऐसे भारत में प्रवेश कर चुके हैं जो कि अपनी स्वतंत्रता के सात दशकों की

उपलब्धियों पर शर्मिंदा है और चाहता है कि उसे एक बार पुनः कंपनी राज का आसरा मिल जाए। तीन सौ बरस पहले तो सिर्फ एक ईस्ट इंडिया कंपनी ने भारत की पूरी समृद्धि और सम्पन्नता की दीमक की तरह चाट डाला था अब तो उसके मुकाबले कई हजार गुना बड़ी सैकड़ों बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ मौजूद हैं। ऐसे में भारत के भविष्य की कल्पना ही सिहरन पैदा कर देती है। इतना ही हम इतिहास के सबसे विरोधाभासी समय में रह रहे हैं। गौर करिए विश्व के सबसे बड़े दानदाता कहलाने वाले बिल और मिलिंडा गेट्स इस समय अपने दान कार्यक्रम के साथ-साथ दुनिया की पूरी पारम्परिक बीज-सम्पदा को अपने अधिकार में ले रहे हैं।

प्रशांत भूषण ने ठीक ही कहा है, ''प्रधानमंत्री के दो चेहरे हैं। जब वे विपक्ष में थे और मुख्यमंत्री थे तो एफडीआई का विरोध किया था, लेकिन सत्ता में बतौर पीएम इसका समर्थन शुरू कर दिया। भारत को विदेशियों के हाथों बेचने की शुरुआत।'' यह भी मजेदार है कि इतनी महत्त्वपूर्ण घोषणा के बाद प्रधानमंत्री तुरंत ताशकंद रवाना हो गये और वित्तमंत्री चीन। चुनाव के दौरान किये गये वायदों से पलटने पर भाजपा व उनके साथियों जिनमें उनका पितृ संगठन राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ भी शामिल है, को कोई ऐतराज नहीं है। सुब्रह्मण्यम स्वामी को रघुराम राजन और अरविन्द को सुब्रह्मण्यम से तकलीफ है लेकिन नीति आयोग के अध्यक्ष पनगढ़िया से कोई तकलीफ नहीं। जबकि उनकी भी राष्ट्रीयता कथित तौर पर (स्वामी फार्मूला) अमेरिकी ही है। सरकार की इस नीतिगत घोषणा ने सिद्ध कर दिया कि अब लोकतंत्र की गुंजाइश या जरूरत समाप्त हो गयी है क्योंकि सत्ता किन्हीं अन्य माध्यमों के हाथ पहुँच चुकी है। अब नीतियाँ संसद में नहीं बल्कि कहीं और बन रही हैं और लागू भी हो रही हैं और बहुमत के बावजूद भाजपा इन पर संसद की मुहर लगवाने का कष्ट तक नहीं करना चाहती। नोबल पुरस्कार विजेता अर्थशास्त्री स्टिग्लित्स ने वर्तमान वैश्विक व्यवस्था में पैदा हो रहे संकटों के लिए अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व बैंक और अमेरिकी सरकार की नीतियों को जिम्मेदारी ठहराते हुए इनकी नीतियों के तीन अटल सिद्धांत गिनाये हैं। ये हैं खर्च में कटौती, निजीकरण और बाजार का खुलापन भारत सरकार की नवीनतम घोषणाओं इन सिद्धांतों पर तौलने से स्थिति पूर्णतया स्पष्ट हो जाती है। इसके अलावा उनका यह भी कहना है : *''आँकड़े बतलाते हैं कि पूँजी की आवाजाही व्यापार चक्र को गहराने का काम करती है यानी मंदी काल में पूँजी सम्बद्ध देश को छोड़कर बाहर निकल जाती है, ठीक उसी समय इसकी सबसे ज्यादा जरूरत होती है। (चीन की वर्तमान स्थिति को देखिए : संपादक) और अंदर तब आती है जब अर्थव्यवस्था में उछाल रहता है, जिससे मुद्रास्फीती बढ़ती है।''* इसका सीधा-सा अर्थ है कि प्रत्येक स्थिति में विदेशी पूँजी निवेश जोखिम का काम है। इसके अलावा भारत से कमाया गया लाभ तो विदेश चला ही जायेगा।

परन्तु उपभोक्तावादी संस्कृति की वकालत करनेवालों के सामने अब कोई दलील काम नहीं करती। अपने मद में चूर नीति निर्माता देश की नहीं अर्थव्यवस्था यानी बाजार की फिक्र करते हैं। चूँकि बाजार की न तो कोई परिभाषा है और न की सीमा अतएव उनका हर कार्य 'जनहित' में ही होता है। हम तो अब भी स्वयं की नियति से अनजान बने हुए हैं। रघुवीर सहाय ने ठीक ही लिखा है, *राष्ट्रगीत में भला कौन वह/भारत भाग्य विधाता है/फटा सुथन्ना पहने जिसका/गुन हरचरना गाता है।* ❑

गुजरात के दलितों पर हुए नृशंस अत्याचारों की सर्वोदय आन्दोलन द्वारा निन्दा

पिछले दिनों गुजरात के ऊना में मृत पशुओं की खाल उतारते समय धर्म के नाम पर कुछ लोगों द्वारा, जिनका सम्बन्ध हिन्दूवादी संगठनों से है, किये गये अमानवीय अत्याचारों की सर्व सेवा संघ (अ. भा. सर्वोदय मंडल) कड़े शब्दों में निंदा करता है।

सर्व सेवा संघ (अ. भा. सर्वोदय मंडल) के अध्यक्ष **श्री महादेव विद्रोही** ने एक प्रेस वक्तव्य में कहा है कि इन दलितों को धार्मिक आतंकवादी गाड़ी में बाँधकर घसीटते हुए पुलिस स्टेशन ले गये एवं पुलिस की उपस्थिति में उन्हें बेरहमी से पीटा और पुलिस चुपचाप देखती रही। हमारी माँग है कि जिन लोगों ने दलितों पर अत्याचार किये हैं उन्हें हत्या के प्रयास तथा आतंकवाद, दलित अत्याचार के अपराध में मुकदमा चलाकर कड़ी-से-कड़ी सजा दी जाय। साथ ही उन पुलिसवालों पर भी कार्रवाई की जाय, जिनकी उपस्थिति में दलितों को बेरहमी से पीटा गया।

हम दलित समाज की भावनाओं के साथ हैं। कई दलितों ने इस घटना के विरोध में आत्महत्या कर ली है जो कि एक दुःखदायी घटना है। हम सभी लोगों से अपील करते हैं कि वे इस घटना का शांतिपूर्ण विरोध अवश्य करें पर आत्महत्या जैसे कदम नहीं उठायें।

इस मुद्दे पर गुजरात सरकार एवं शासक पार्टी की चुप्पी से आभास होता है कि वे इस घटना का मौन समर्थन कर रहे हैं। आज जब पूरा गुजरात जल रहा है ऐसे में उनकी यह मौन सम्मति आग में घी डालने का काम कर रही है। **–भवानी शंकर कुसुम**

राष्ट्रीय प्रवक्ता, सर्व सेवा संघ

व्यक्तिगत स्वतंत्रता और सामाजिक संयम

❑ गांधी

मैं यह सिद्ध कर दिखाने की आशा रखता हूँ कि सच्चा स्वराज्य थोड़े लोगों के द्वारा सत्ता प्राप्त करने से नहीं, बल्कि सब लोगों द्वारा सत्ता के दुरुपयोग का प्रतिकार करने की क्षमता प्राप्त करने से हासिल किया जा सकता है। दूसरे शब्दों में, स्वराज्य जनता में इस बात का ज्ञान पैदा करके प्राप्त किया जा सकता है कि सत्ता पर नियंत्रण और नियमन करने की क्षमता उसमें है।

सत्य यह है कि सत्ता जनता के हाथ में होती है और वह कुछ समय के लिए उन लोगों के हाथ में सौंपी जाती है, जिन्हें जनता चुनती है।

किसी भी पुलिस या सेना का दबाव ऐसी जनता की दृढ़ इच्छा को दबाने में समर्थ नहीं होता, जो बड़े से बड़े कष्ट भोगने को तुली हुई है।

मतलब गोरी सेना के शासन को हटाकर काली सेना का शासन स्थापित करना हो, तो हमें कोई भी दौड़धूप या शोरगुल मचाने की जरूरत नहीं रह जाती। उस हालत में कम से कम आम जनता का कोई महत्त्व नहीं रह जायेगा। उस शासन में आम लोगों का अगर अधिक बुरा नहीं तो उतना बुरा शोषण तो होगा ही, जितना कि आज हो रहा है।

यूरोप की जनता की लूट हिंसा के ही बल पर टिकी हुई है।

हिन्दुस्तान को केवल अंग्रेजों के जुए से छुड़ाने में ही मेरी दिलचस्पी नहीं है। मैं एक निरंकुश सत्ता को हटाकर उसके स्थान पर दूसरी निरंकुश सत्ता को बैठाना नहीं चाहता।

हमें अपने आंदोलन में से हर प्रकार की जबरदस्ती और दबाव को बिलकुल हटा देना चाहिए। असहयोग के सिद्धान्त का स्वतंत्रता से पालन करनेवाले यदि हम केवल मुट्ठीभर ही हों, तो दूसरे लोगों को अपने मत का बनाने में हमें प्राण भी गँवाने पड़ सकते हैं। परन्तु उस हालत में कहा जायेगा कि हमने ध्येय की सच्चे अर्थ में रक्षा की है और हम उसके सच्चे प्रतिनिधि हैं।

हमें व्यक्तिगत स्वतंत्रता और सामाजिक संयम के बीच समन्वय करना सीखना है।

मैं राज्य की सत्ता की वृद्धि को बड़े से बड़े भय की दृष्टि से देखता हूँ, क्योंकि अहिंसा जाहिरा तौर पर तो वह शोषण को कम से कम करके समाज को लाभ पहुँचाती है, परन्तु मनुष्य के व्यक्तित्व को—जो सब प्रकार की उन्नति की जड़ है—नष्ट करके वह मानव जाति को बड़ी से बड़ी हानि पहुँचाती है।

राज्य केन्द्रित और संगठित रूप में हिंसा का प्रतीक है। व्यक्ति की आत्मा होती है, परन्तु चूँकि राज्य एक आत्मा-रहित जड़ मशीन होता है, इसलिए उससे हिंसा कभी नहीं छुड़वायी जा सकती; उसका अस्तित्व ही हिंसा पर निर्भर है।

स्वराज्य का अर्थ है सरकार के नियंत्रण से स्वतंत्र रहने का सतत प्रयत्न, फिर वह विदेशी हो या राष्ट्रीय। अगर लोग जीवन की हर बात की व्यवस्था और नियमन के लिए सरकार की ओर ताकते रहें, तब तो स्वराज्य-सरकार की शामत ही आ जाय।

शासित प्रजा की स्वीकृति के बिना बड़ी से बड़ी तानाशाह सरकार भी टिक नहीं सकती; और यह स्वीकृति तानाशाह शासक अकसर जबरन ही प्रजा से प्राप्त करता है।

लोकतंत्र और हिंसा कभी एक साथ चल ही नहीं सकते। जो राज्य आज केवल नाम के लिए ही लोकतांत्रिक हैं, उन्हें या तो खुले तौर पर सर्वसत्ताधारी राज्य बन जाना चाहिए, अथवा यदि वे सच्चे अर्थ में लोकतांत्रिक बनना चाहें, तो हिम्मत के साथ उन्हें अहिंसक बन जाना चाहिए।

''किसी अन्यायी सरकार के शासन में सत्ता और सम्पत्ति रखना एक अपराध है; उस स्थिति में गरीबी ही सद्‌गुण है।''

अगर कोई सरकार अन्याय करे, तो प्रजा को उस सरकार के साथ पूरा या आंशिक असहयोग कर देना चाहिए।

प्रत्येक हितकारी आंदोलन पाँच मंजिलों से गुजरता है—उपेक्षा, हँसी, निन्दा, दमन और आदर। *(कृष्णा कृपालानी द्वारा संग्रहित और संपादित 'हम सब एक पिता के बालक' से उद्धृत।)*

प्रस्तुति : बद्रीनाथ सहाय

बम और छुरी

''हिंसा में संसार का विश्वास ही बम और छुरी की उत्पत्ति का कारण है। हिंसा को ही लोग मनचाहे इन्साफ का जरिया समझते हैं। केवल राष्ट्रों के दण्ड-विधान में अपराध न माने जाने के कारण वे नये-नये हथियारों का आविष्कार कर रहे हैं। उसके कारण बढ़ती हुई हिंसा के भावों से दुनिया का गला घुट रहा है। यदि किसी दुनिया के समस्त देशों और धर्मों के कुछ गरम दिल लोग अपनी जान को खतरे में डाल कर भी कानून तोड़ने लगें तो इसमें कोई आश्चर्य न होगा। जब तक दुनिया के लोग लड़ाई की बात को सहते या निभाते रहेंगे। तब तक दुनिया में बम फेंकनेवाले और हत्यारे भी बने रहेंगे। यदि देश में उनसे सहानुभूति न रखने का वातावरण हो, उसके कार्यों से नफरत करें, तो उन पर अवश्य ही अंकुश रखा जा सकता है।'' **–महात्मा गांधी**

(हिन्दी नवजीवन 18-4-1899)

पानी गटकते ताप विद्युत संयंत्र

❑ श्रीपाद धर्माधिकारी

जैसे-जैसे गर्मी बढ़ती जा रही है वैसे वैसे अकाल और पानी की बढ़ती कमी के दु:ख भरे समाचार भी निरंतर बढ़ते जा रहे हैं। ज्यादातर किस्से किसानों, पशुओं, परिस्थितियों और गाँवों, कस्बों एवं शहरों में पीने के पानी की बढ़ती किल्लत पर एकाग्र हैं। परंतु सामान्यतः उद्योगों खासकर कोयला आधारित ताप विद्युत संयंत्रों की स्थिति सामने नहीं आ रही है। देश में पानी की कमी का ताप विद्युत संयंत्रों पर भी अत्यन्त प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। इनके परिचालन में पानी की अत्यधिक आवश्यकता पड़ती है। पानी की आवश्यकता मुख्यतः उस भाप को ठंडा करने के लिए जिससे विद्युत उत्पादन होता है और कोयला जलने से पैदा हुई राख के निपटान के लिए, पड़ती है। एक सामान्य ताप विद्युत संयंत्र जिसकी उत्पादन क्षमता 1000 मेगावाट की हो, को प्रतिवर्ष 2.80 करोड़ क्यूबिक मीटर पानी की आवश्यकता पड़ती है। जिससे कि 5,600 एकड़ कृषि भूमि की सिंचाई हो सकती है। और इतना पानी करीब 5 लाख लोगों की घरेलू आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु पर्याप्त है। पानी की इतनी आवश्यकता के चलते स्थानीय जल प्रणाली पर दबाव पड़ता है। खासकर कम वर्षा वाले वर्षों में। इसके अलावा जिन क्षेत्रों में एक से अधिक विद्युत संयंत्र हैं वहाँ पर अकसर स्थितियाँ प्रतिकूल बनी रहती हैं। अतएव पानी की वजह से या तो विद्युत संयंत्र बंद हो जाते हैं अथवा इसके अन्य प्रयोग एवं उपभोक्ताओं पर असर पड़ता है। इस वर्ष ठीक ऐसा ही हुआ है।

इस वर्ष पानी की कमी की वजह से बंद हुए ताप विद्युत संयंत्रों को अभी तक 8.7 अरब यूनिट विद्युत उत्पादन का नुकसान हो चुका है। यह आँकड़ा केन्द्रीय विद्युत प्राधिकरण (सीईए) द्वारा विद्युत संयंत्रों द्वारा प्रतिदिन किए गये उत्पादन को सार्वजनिक करने से ज्ञात हुआ है। इसमें सबसे बड़ा हिस्सा महाराष्ट्र के बीड़ जिले में स्थित पारली ताप विद्युत संयंत्र का है जो कि पिछले कई वर्षों से पानी की कमी के कारण बंद है। यदि हम पारली को छोड़ भी दें तो पानी की कमी की वजह से संयंत्रों को 582 मिलियन यूनिट बिजली का नुकसान झेलना पड़ा है। यह आँकड़े 1 दिसंबर 2015 से 24 अप्रैल 2016 के मध्य के हैं और इसमें पारली संयंत्र शामिल नहीं है, जो कि 1 अप्रैल 2015 से बंद है। अन्य प्रभावित ताप विद्युत संयंत्रों में कर्नाटक के रायचुर एवं महाराष्ट्र के ईमको वारोरा ताप विद्युत संयंत्र शामिल हैं। गौरतलब है कि वास्तविक हानि तो और अधिक होगी क्योंकि आँकड़ों में अप्रैल के आखिर तक की गणना है और पानी की वास्तविक कमी तो इसके बाद होती है जो मानसून की शुरुआत अर्थात् जून के दूसरे हफ्ते तक जारी रहती है। वैसे देश में सन् 2015-16 के दौरान कुल 1107 अरब यूनिट विद्युत उत्पादन हुआ। इसका अर्थ हुआ यह नुकसान देश के कुल उत्पादन का महज 0.7 प्रतिशत होता है। कुल उत्पादन के अनुपात में यह काफी कम है लेकिन किसी एक संयंत्र पर इसके अत्यन्त विपरीत वित्तीय प्रभाव पड़ते हैं।

इसके अलावा इन आँकड़ों से इतर पानी की कमी से होनेवाली वास्तविक हानि बहुत अधिक होती है। इसके दो कारण हैं। पहला यह कि तमाम प्रस्तावित एवं उत्पादन के लिए पूरी तरह से तैयार संयंत्र भी पानी की कमी से प्रभावित होते हैं। इसका कारण यह है कि संयंत्र के आसपास का क्षेत्र प्रभावित हो चुका होता है और वहाँ के जलस्रोतों पर दबाव पड़ना प्रारम्भ हो जाता है। उदाहरणार्थ एन टी पी सी के कर्नाटक स्थित 2400 मेगावाट के कुडगि ताप विद्युत संयंत्र की पहली इकाई के मार्च 2016 में प्रारम्भ होने की संभावना थी। लेकिन कृष्णा नदी बेसिन में पानी की कमी के चलते और चूँकि पानी कृष्णा नदी एवं अलमाट्टी बाँध से लेना था और इनमें पानी की कमी का प्रभाव पहले ही रायचुर ताप विद्युत संयंत्र झेल रहा है, ऐसे में पानी की कमी के चलते इस संयंत्र को चालू नहीं किया जा सका। इसी तरह एनटीपीसी के महाराष्ट्र के शोलापुर में स्थित 320 मेगावाट के ताप विद्युत संयंत्र की पहली इकाई का संचालन (कमीशन) मई 2016 से प्रारम्भ होना था, को मार्च 2017 तक के लिए टाल दिया गया है। हालाँकि इसका अधिकारिक कारण निर्माण में देरी बताया गया है लेकिन पानी की उपलब्धता भी एक गंभीर मुद्दा है। यह परियोजना अकाल प्रभावित क्षेत्र में स्थित है और इसे कृष्णा बेसिन में बहनेवाली भीमा नदी पर स्थित उजानी बाँध से पानी देने का वायदा किया गया था। परंतु इस वर्ष बाँध में वस्तुतः पानी का शून्य भंडारण है। महाराष्ट्र सरकार ने सुझाव दिया है कि अब एनटीपीसी की बजाए बाँध से (शुद्ध) पानी लेने के शोलापुर नगर निगम से सीवर के उपचारित जल से संयंत्र के परिचालक करें। यह सुझाव स्थायी इंतजाम हेतु है न कि सिर्फ इसी वर्ष के लिए। वहीं एनटीपीसी का दावा है कि यह व्यवहार्य नहीं है क्योंकि यह काफी महँगा पड़ेगा और उपचारित जल की गुणवत्ता जरूरतों के अनुकूल नहीं है। अतएव तकरीबन पूर्ण हो चुके संयंत्र का प्रारम्भ और

परिचालन दोनों ही विलम्ब और अनिश्चितता के फेर में पड़ गये हैं। इस तरह के अन्य और भी मामले हैं।

दूसरा कारण यह है कि पानी की कमी के चलते अनेक मामलों में ताप विद्युत संयंत्र बंद तो नहीं हुए लेकिन वे अपनी क्षमता से कम विद्युत उत्पादन कर पा रहे हैं। सी ई ए प्रतिदिन 'प्रोग्राम्ड जनरेशन' (उस दिन कितने उत्पादन की योजना बनी है) के साथ ही साथ वास्तविक उत्पादन के आँकड़े जारी करता है। इससे पता चलता है कि प्रोग्राम्ड जनरेशन अकसर अधिकतम संभाव्य उत्पादन से काफी कम होता है। कम उत्पादन का कारण नहीं दिया जाता। हमारा अंदेशा है कि वहाँ इतना पानी नहीं होता कि अधिकतम उत्पादन किया जा सके। इस वर्ष अभी तक पिछले वर्ष से ज्यादा का नुकसान हो चुका है। सीईए द्वारा ताप विद्युत संयंत्रों की कार्यक्षमता समीक्षा रिपोर्ट 2011-12 में बताया कि सन् 2010-11 में 17 आउटेजेस (कितनी बार संयंत्र बंद हुआ) में 3901.03 मिलियन यूनिट और सन् 2011-12 में 10 आउटेजेस में पानी की कमी की वजह से 725.03 मिलियन यूनिट का नुकसान हुआ है।

दीर्घकालिक समस्याएँ : सामान्यतया प्रतीत होता है कि समस्या किसी विशिष्ट वर्ष में आयी वर्षा में कमी से संबंधित है। लेकिन यह एक व्यापक मूलभूत समस्या है। पानी को गटक जानेवाले इन ताप विद्युत संयंत्रों को न केवल अकाल प्रभावित क्षेत्रों में स्थापित किया गया है बल्कि इन्हें समूहों में स्थापित किया गया है। उदाहरण के लिए कर्नाटक के रायचुर में स्थित ताप विद्युत संयंत्र को इस वर्ष पानी की कमी की वजह से बंद करना पड़ा लेकिन इसकी निकट परिधि में तीन अन्य ताप विद्युत संयंत्र 1600 मेगावाट का यमरिस 800 मेगावाट का इडलापुर एवं 420 मेगावाट का वेड्लुट (केप्टिव) ताप विद्युत संयंत्र स्थापित हो रहे हैं। एक अन्य उदाहरण उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश की सीमा पर स्थित सिंगरौली क्षेत्र का है। वहाँ बड़ी संख्या में ताप विद्युत संयंत्र स्थापित हैं। इनमें से अधिकांश रिहंद जलाशय से पानी लेते हैं। केन्द्रीय जल निगम के आँकड़े दर्शाते हैं कि पिछले 10 वर्षों में मानसून के समाप्त होने पर रिहंद जलाशय में औसत भंडारण केवल 47 प्रतिशत (अपनी क्षमता का) ही हो पाता है। इस तरह के क्षेत्रों में बड़ी संख्या में ताप संयंत्रों की स्थापना से पैदा होनेवाले जल अकाल से पानी के अन्य उपयोगकर्ताओं जैसे घरेलू उपभोक्ता और कृषि क्षेत्र का विद्युत उत्पादन क्षेत्र से संघर्ष का खतरा पैदा हो जाता है।

दुर्भाग्यवश ताप विद्युत संयंत्रों से संबंधित वर्तमान नीति में पानी की कमी को ध्यान में ही नहीं रखा गया है। वास्तव में वर्तमान नीति बहुत सीमित है और काफी पुरानी पड़ चुकी है। लेखक को सूचना का अधिकार कानून के अंतर्गत सन् 1987 का एक दस्तावेज मिला जिसमें कि सिर्फ एक संयंत्र का जिक्र है। 10 पृष्ठों के इस दस्तावेज में ''ताप विद्युत संयंत्रों हेतु पर्यावरणीय दिशानिर्देश'' को पर्यावरण एवं वन मंत्रालय द्वारा प्रकाशित किया गया था। राष्ट्रीय हरित प्राधिकरण द्वारा 23 मार्च 2012 को सोमपेरा ताप विद्युत संयंत्र मामले में कठोर निर्देश देने के बावजूद पर्यावरण एवं वन मंत्रालय इस नीति को सामयिक बना पाने में असफल रहा। इस मुद्दे पर एक महत्त्वपूर्ण कदम केन्द्रीय ऊर्जा मंत्रालय ने उठाया है। उनके अनुसार जहाँ तक सम्भव हो शुद्ध पानी के स्थान पर उपचारित सीवेज पानी का इस्तेमाल किया जाए। यह एक स्वागत योग्य कदम है, परंतु इसे सावधानीपूर्वक ही उठाना पड़ेगा क्योंकि इसमें काफी जोखिम भी है। ऐसा इसलिए क्योंकि सीवेज 'कचरा' या फालतू चीज नहीं है।

अधिकांश मामलों में नगरों और शहरों को पानी इस उम्मीद के साथ आवंटित किया जाता है कि यह वापसी बहाव (रिटर्न फ्लो) में सहायक होगा। क्योंकि घरेलू प्रयोग के बाद करीब 80 प्रतिशत पानी दोबारा नदी में मिलता है जिससे शहर के निचले इलाकों में प्रवाह बना रहता है। सैद्धांतिक तौर पर यह रिटर्न फ्लो उपचारित जल का होना चाहिए, लेकिन अधिकांशतः यह नहीं होता लेकिन निचले क्षेत्रों में प्रवाह के लिए इसकी मौजूदगी अनिवार्य है। अतएव सीवेज को ताप विद्युत संयंत्रों की ओर मोड़ने से पहले बेसिन व उप बेसिन क्षेत्रों का आकलन कर लेना आवश्यक है। वैसे इसका इस्तेमाल सिंचाई में भी होता है।

वास्तविकता तो यही है कि ताप विद्युत संयंत्र सीवेज या अन्य कोई भी पानी का प्रयोग करें। परंतु वे पानी का अत्यधिक प्रयोग करते हैं अतएव पानी की कमीवाले इलाकों में इस तरह के संयंत्रों की स्थापना से बचना चाहिए। दीर्घावधि हेतु माकूल समाधान तो यही है कि कोयला आधारित संयंत्रों को सौर ऊर्जा जैसे ऊर्जा के माध्यमों से बदला जाना चाहिए। इससे न केवल पानी की बचत होगी बल्कि हमारा पर्यावरण भी विपरीत प्रभावों से बचा रह पायेगा। (सप्रेस)

पाठक का पत्र

सर्वोदय अमृत रस

'सर्वोदय' सबके सुखी होने का विचार है। स्वार्थ, भौतिक स्पर्द्धा, राजनैतिक दलबंदी आदि द्वारा राग, द्वेष, घृणा, हिंसा आदि सर्वनाश की त्रासदी से ग्रसित मानव को त्राण दिलाने के लिए विश्वबन्ध्य महात्मा गांधी ने भारतीय संस्कृति के 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' के आधार पर समता, सागदी, दया, प्रेम, सहयोग, विश्वास, अहिंसा आदि मानवीय सद्गुणों के सम्मिश्रण से 'सर्वोदय अमृत रस' तैयार किया है। निष्ठापूर्वक जो कोई पीये, निहाल हो जाये।

–मानसिंह रावत

सर्वोदय सेवक, हल्दूखाता, कोटद्वार

नीम के औषधीय गुण

❑ प्रो. (डॉ.) योगेन्द्र यादव

एक ऐसा पेड़, जो देश के हर प्रांत, हर क्षेत्र में प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। इस पेड़ की उपयोगिता के कारण ही प्राचीन काल में इसे देवीय आवास के रूप में माने जाने की परम्परा रही है। इसी कारण सिर्फ आयुर्वेद ग्रंथों में ही नहीं, संस्कृत के अधिकांश ग्रंथों में किसी न किसी रूप में इसका वर्णन प्राप्त होता है। पश्चिमी बंगाल में इसे नीम, महाराष्ट्र में कडूलिंब, गुजरात में लीमड़ो, तमिलनाडु में बेम्बू आदि नामों से पुकारा जाता है। इसका पेड़ घना होता है, इसलिए उत्तर भारत के हर दरवाजे पर इसे लगाया जाता है। इसे लगाने से एक ओर वातावरण तो परिशुद्ध होता ही है, दूसरी ओर घरेलू जानवरों को बाँधने के लिए इसकी छाया का उपयोग किया जाता है। इसके अलावा इस पेड़ की पत्तियों, छालों, सीकों का औषधीय उपयोग भी समय-समय पर विभिन्न बीमारियों में किया जाता है। जिसका वर्णन इस प्रकार है—

ज्वर में लाभदायक : हर प्रकार के ज्वर में नीम उपयोगी होती है। यदि किसी व्यक्ति को ज्वर हो गया हो, तो वह 21 नीम की सीकें लेकर उसे 21 नग काली मिर्च के साथ पीस ले। फिर उसमें थोड़ा-सा पानी मिलाकर उसे आग पर हल्का गुनगुना करने के पश्चात् दो या तीन बार पिलाने से कठिन से कठिन ज्वर उतर जाता है। यदि रोगी को ज्वर के साथ उल्टी हो रही हो, तो उसे नीम की ऊपरी गुठली को जला कर उसे पानी में डालकर बुझा लें, फिर उसी पानी को छान कर पिला दें, इससे उसकी उल्टी तुरंत बंद हो जायेगी। फिर ऊपर बतायी गयी नीम की औषधी को निरंतर देते रहें, यदि ज्वर में दाह की शिकायत हो, तो नीम के पत्ते पीस कर उसे छान लें, और उसमें शहद मिलाकर उसका घोल रोगी को पिलायें। दाह में तुरंत आराम मिलेगा। यदि किसी बच्चे को ज्वर हो गया हो, तो उसे नीम के सूखे पत्तों में घी मिला कर उसका धुप देने से बच्चे को ज्वर से तुरंत राहत मिलती है।

फोड़ा-फुंसी एवं चेचक में लाभदायक : गर्मी एवं बरसात के दिनों में चेचक निकलने के मौसम में यदि थोड़ी-सी सावधानी बरतें, और इन बीमारियों से निजात पाया जा सकता है। इसके लिए नीम के मुलायम पत्तों को तोड़कर उसी मात्रा में उसमें काली मिर्च मिलाकर पीस लें। चने के दाने के बराबर उसकी गोली बना लें, चेचक एवं गर्मी के दिनों में एक गोली सुबह लेने से इन बीमारियों से दूर रहा जा सकता है। यदि इसका लगातार दो सप्ताह तक उपयोग किया जाए, तो फोड़ा-फुंसी भी नहीं निकलती है। यदि फोड़ा निकल गया हो, और वह पक जाये, और उसका मुँह छोटा हो, तो नीम के पत्तों को पीसकर उसकी पटलिस बाँधने से उसका शोधन हो जाता है।

रक्त शुद्धि में लाभदायक : रक्त शुद्धि करने में भी नीम बहुत ही लाभदायक साबित होती है। यदि किसी का रक्त अशुद्ध हो जाये, तो उसे नियमित रूप से नीम की पत्ती का उपयोग खाली पेट हर सुबह करना चाहिए। इसके लिए उसे नीम की नर्म पत्तियों को पीस लेना चाहिए, और उसे किसी गर्म चाकू से छौंक लगाकर लगातार कम से कम या रक्त अशुद्धि की प्रकृति के अनुसार 15 दिनों तक इसका सेवन करना चाहिए। इससे रक्त शुद्ध हो जाता है।

पेट में कीड़े पड़ने पर लाभदायक : यदि किसी बच्चे या बुजुर्ग के पेट में कीड़े पड़ जायें या कृमि के लक्षण दिखायी दें, तो उसके लिए नीम का सेवन बहुत ही लाभदायक सिद्ध होता है। ऐसे रोगियों को नीम की पत्तियों को पीस कर उसमें बराबर मात्रा में शहद के साथ पीने से लाभ होता है। यदि पेट में कीड़े अधिक मात्रा में पड़ गये हों, तो इसे दिन में तीन बार लेना चाहिए, अन्यथा दो बार।

पित्त रोग में लाभदायक : ग्रीष्म ऋतु में होनेवाली पित्त में नीम बहुत लाभकारी नहीं होती है। किन्तु यदि शीत ऋतु में पित्त की बीमारी हो तो उसमें बहुत लाभदायक सिद्ध होती है। ऐसे रोगियों को नीम के पत्तों में घी में भूनकर आँवला चूर्ण मिलाकर खाने से शीत पित्त में बहुत ही आराम मिलता है। इसका सेवन सुबह-शाम करना चाहिए। इसके अलावा इस औषधी का उपयोग फोड़े-फुंशी, घाव, अम्ल-पित्त एवं रक्त विकार में किया जा सकता है। इन बीमारियों में भी लाभ मिलता है।

दन्त रोग या पायरिया में लाभदायक : नीम दन्त रोग या पायरिया में भी बहुत लाभदायक सिद्ध होता है। इसके लिए नीम की छाल का काढ़ा बना लेना चाहिए और उसका सेवन सुबह-शाम नियमित रूप से करना चाहिए। इससे किसी प्रकार का दन्त रोग नहीं होता है तथा किसी भी प्रकार की दुर्गन्ध भी नहीं आती है। नीम की दातून करने से दाँतों की चमक एवं सफाई भी ठीक से होती है।

कुष्ठ रोग में लाभदायक : नीम का उपयोग कुष्ठ रोग में लाभदायक सिद्ध होता है। कुष्ठ रोगी को नीम के पत्तों को पीस कर

उसे अच्छी तरह छान लेना चाहिए। और इस रस का उपयोग लगातार 6 महीने तक करना चाहिए। इस औषधी से हर प्रकार के कुष्ठ रोग ठीक हो जाते हैं।

योनि रोग दूर करने में लाभदायक : किसी भी प्रकार के योनि रोग में नीम अत्यन्त लाभकारी होता है। यदि किसी स्त्री को गाढ़े स्राव के बाद योनि हमेशा गीली रहती हो, और उससे बदबू आती हो, तो इस रोग से पीड़ित महिला को नीम के पत्तों को उबाल कर बचे हुए पानी से योनि को अच्छी तरह धोना चाहिए। यदि रोग अधिक है, तो बची हुई पत्ती को बाँध लेना चाहिए। इसके बाद नीम की छाल को जला कर उसका धुँआ देना चाहिए, इससे योनि का ढीलापन भी दूर हो जाता है और वह कड़ी हो जाती है। यदि किसी कारणवश योनि में दर्द होता हो, तो ऐसी दशा में नीम के बीजों को भिगोकर उसे पीस लें, उसकी पोटली बनाकर योनि पर रखें, एक दो बार इस प्रयोग को करने से योनि दर्द से राहत मिलती है।

खूनी बवासीर में लाभदायक : यदि किसी व्यक्ति को खूनी बवासीर हो गयी हो तो उसे 12 नीम के फलों को गिरी पीस कर दही के साथ खाने से लाभ मिलता है। या पहले गिरी खाकर दही खाएँ, तो भी लाभ होता है। या गिरी में गुड़ मिलाकर उसकी गोलियाँ बना लें, और उसका सेवन करें, इससे बवासीर में रक्त आना तुरंत बंद हो जाता है। ❑

कविता

विभीषिका है...

❑ जगदम्बा भाई

विभीषिका है मूल्य अवमूल्यन की देश में,
भौतिक समृद्धि की चकाचौंध छायी आज।

जंगल, जमीन, जल शोषण के शिकार बने,
पर्यावरण दूषित प्रदूषित चहुँ ओर आज।

संकट है घोर आज पानी का सभी जगह,
पानी बिनु सून सब, कहावत ये पुरानी है।

प्यासी धरा प्यासे झी, कूप, तालाब सब,
प्यासे सभी जीव जन्तु, प्यासी जिन्दगानी है।

ज्ञान, ध्यान, संयम से विरत आज मानव रहा,
नीति, अनीति का नहीं कुछ ज्ञान है।

राजनीति, नीतिविहीन आज देश में,
जनसेवकों को, जनसेवा का न भान है।

अर्थनीति बनी है, पिशाची अर्थनीति आज,
शासन में शुचित का नहीं कुछ ध्यान है।

इन विभीषिकाओं से देश को बचाओ प्रभु,
सेवक की विनती यही, यही अरदास है। ❑

तानाशाही असह्य

❑ जयप्रकाश नारायण

मेरे शरीर में जब तक दम में दम है, खून की एक भी बूँद बाकी है, मैं डिक्टेटरशाही से मुकाबला करूँगा क्योंकि मानव-समाज का इससे अधिक पतन मैं किसी दूसरी बात में नहीं देखता। मैं किसी के हाथों अपनी बुद्धि और आत्मा बेचना नहीं चाहता। जहाँ कहीं डिक्टेटरी होती है, वहाँ साधारण जनता ही क्यों सभी को, बड़े से बड़े विद्वानों को भी पशु की कोटि में ला दिया जाता है। अगर कोई ऐसा मानता है कि तानाशाही से समस्याएँ हल हो जायेंगी तो मैं नहीं समझता कि वह होश में है।

गांधीजी का आदर जब तक इस देश की जनता में है तब तक उनका कोई भी अनुयायी किसी हिटलर के सामने घुटने नहीं टेकेगा।

मेरा हक मुझे वापस दे दो

❑ नसीर अहमद 'नसीर'

कुबेर के वंशजो
मोतियों से तौले जाने वाले कैरटों
स्वर्ण कलशों पर कुंडलित नागों
देखते हो तुम चिमनियों की
ऊँची ऊँची मीनारें
माल से पटी बाजारें
स्कॉच से छल्की बहारें
दृष्टि थोड़ी और ऊपर उठाओ
इसे धुँए तक ले जाओ
ये धुआँ है
मेरी भूख की सुलगन का
तुम्हारी वासनाओं के घुटे
अबला यौवन का
नंगे-अधनंगे बूढ़े बचपन का
आओ आओ
जरा कार से नीचे आओ
देखो बल्गम में खून की फुटकी
मजबूरन वेश्या बनी औरत...
एक दूसरे का मुँह नोचते बच्चे...
सड़क पर बदबू बिखेरती लाश...
ये सबके सब
तुम्हारी चिमनियों से दब गये हैं
तुम्हारी तिजोरियाँ भरते-भरते
मर गये हैं
अगर कुछ कर सकते हो?
इस बहन से हाथ में
राखी बँधवाओ
बूढ़े को अस्पताल भिजवाओ
मुर्दों को छोड़ो जिंदों को
कफन बँटवाओ।
जानता हूँ ये तुम्हारा कारोबार नहीं
तुम...तुम इंसान कहलाने के हकदार नहीं
हम गौतम के पुजारी हैं
इस्लाम के व्यापारी हैं
मजहब में सब जायज है
लेकिन अब सँभल जाओ
मुझे भूखा मत सुलाओ
मेरा हक मुझे वापस दे दो
वरना एक दिन
इतिहास काँपेगा
तारीख रोएगी
जब तुम्हारे खरीदे हुए
इतिहास के पन्नों से
मैं तुम्हारा
नाम तक मिटा दूँगा ❑

नेक कौन? ईमानदार कौन?

❑ श्रीकृष्णदत्त भट्ट

नेक माने अच्छा, भला, सत्पुरुष।

नेक वह है, जो नेक काम करता है। भला काम करता है।

नेक वह है, जो खुद तकलीफ उठाकर दूसरों का भला करता है।

नेक वह है, जो बुराई का बदला भलाई से देता है।

नेक वह है, जो कभी झूठ नहीं बोलता। कड़ुआ नहीं बोलता। किसी की निन्दा नहीं करता। जिसकी बात एक होती है।

नेक वह है, जो किसी के माल पर नीयत नहीं डुलाता।

नेक वह है, जो बात का सच्चा और लँगोट का पक्का होता है।

नेक आदमी नेकी तो करता ही है, पर उसका डंका नहीं पीटता।

ईनाम नहीं, मुझे सजा दीजिए गुरुजी!

गोपाल कृष्ण गोखले के बचपन की बात है।

एक दिन उनके गणित के गुरुजी उनसे बोले–तूने सारे सवाल सही किये हैं। ले, तुझे मैं यह किताब ईनाम देता हूँ।

ईनाम का नाम सुनकर गोपाल कृष्ण रोने लगे।

गुरुजी तो हैरान!

गोपाल कृष्ण गोखले ने रोते-रोते कहा–गुरुजी, आप मुझे ईनाम नहीं, सजा दीजिये।

सजा की क्या बात है बेटा?

बात यह है कि इनमें से एक सवाल मुझे नहीं आ रहा था। सो मैंने उसे अपने एक मित्र की मदद से लगाया है। फिर मैं ईनाम पाने का हकदार कैसे हो सकता हूँ।

गुरुजी बहुत प्रसन्न हुए। बोले बेटा, पहले मैं यह ईनाम तेरी बुद्धि के लिए दे रहा था। अब यह ईनाम देता हूँ, तेरी सच्चाई के लिए। ईमानदारी के लिए! ले, इसी तरह तू हमेशा सच बोलता रह।

भगवान तेरा भला करे। ❑

सर्व सेवा संघ (स्वत्वाधिकारी) के लिए महामंत्री, शेख हुसैन द्वारा सर्व सेवा संघ परिसर, राजघाट, वाराणसी (उ.प्र.) 221001 से प्रकाशित तथा प्रिन्टेक, इंडियन प्रेस कॉलोनी, मलदहिया, वाराणसी से मुद्रित। संपादक : बिमल कुमार। छपी प्रतियाँ : 1400